 ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

पौष-माघ, संवत नानकशाही ५३९
जनवरी **2008** वर्ष १ अंक ५

संपादक — सिमरजीत सिंह, *एम. ए., एम. एस. सी.*
सहायक संपादक — सुरिंदर सिंह निमाणा, *एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बीएड.*

चंदा

प्रति कापी	३ रुपये
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव
धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६



फोन : 0183-2553956-57-58-59

एक्सटेंशन नंबर { वितरण विभाग **303**, संपादकीय विभाग **304** }

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com

website : www.sgpc.net

विषय सूची

गुरबाणी विचार

डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ ॥
बधोहु पुरखि बिधातै तां तू सोहिआ ॥
वसदी सघन अपार अनूप रामदास पुर ॥
हरिहां नानक कसमल जाहि नाइऐ रामदास सर ॥ *(पन्ना १३६२)*

पंचम सतिगुरु श्री गुरू अरजन देव जी श्री गुरू ग्रंथ साहिब में 'फुनहे महला ५' के शीर्षक तले अंकित इस पावन शब्द में आत्मिक स्नान उपलब्ध कराने की क्षमता वाले अमृत सरोवर और इस अमृत सरोवर के इर्द-गिर्द स्थापित मनोहर स्थल 'रामदासपुर' की महिमा का गुणगान करते हुए मनुष्य-मात्र के लिए कल्याणकारी आत्मिक शुद्धता एवं रुहानी मंजिलों के विकास की ओर प्रेरित करने का परोपकार करते हैं।

गुरू जी फरमान करते हैं कि हे राम (प्रभु) के दासों के सरोवर! मैंने सभी स्थान इन आँखों से देख लिये हैं, जिससे मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि इस संसार में कोई अन्य स्थान तेरे जैसा नहीं है। तुझको विधाता ने स्वयं रचित किया है इसीलिए तो तू शोभा दे रहा है, सुंदर दिखाई दे रहा है।

गुरू जी फरमान करते हैं कि हे राम (अकाल पुरख परमात्मा) के दासों के नगर! तुझ में बहुत सघन जनसंख्या का वासा है। तू सुंदरता में कोई किनारा, कोई सीमा नहीं रखता। तू बेहद अनुपम है। सतिगुरु जी अंत में फरमान करते हैं कि हे राम (अकाल पुरख) के दासों के सरोवर! तुझ पर परमात्मा की ऐसी बख्शिश है कि तुझ में आत्मिक स्नान करने से सभी पाप-विकार स्वत: ही दूर हो जाते हैं भाव मन निर्मल हो जाता है और आत्मा परमात्मा से साक्षात्कार की विस्मादी अनुभूति करती है। कहने से भाव यह कि आत्मिक स्नान प्रदान करने के कारण रामदास सर एवं रामदासपुर अपार महिमा के पात्र हैं।

संपादकीय

आओ, समस्त वनस्पति से प्यार करें एवं इसकी संभाल हेतु क्रियाशील होवें!

समस्त सृष्टि-रचना उस परमात्मा द्वारा सृजित की गई होने के कारण अभिन्न अथवा एक इकाई है। पवन, पानी, अग्नि, मिट्टी एवं आकाश आदि सृष्टि-रचना और विनाश का एक प्राकृतिक चक्र चला रहे हैं। सृष्टि-रचना में वनस्पति अत्यंत महत्वपूर्ण है। रचनाकार परमात्मा ने वनस्पति को विस्मादी विविधता में रचा है। वनस्पति में से दृष्टपात होने वाली हरियाली जीव-जगत को तथा विशेष रूप से मनुष्य-मात्र को सुखद अनुभूति प्रदान करती है। इसमें से प्रकट होते विभिन्न रंगों के फूल अपने रूपाकारों एवं सुगंधि से मनुष्य को विस्माद बख्शते हैं। इससे भी बढ़कर वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो वनस्पति के बिना मनुष्य-मात्र का इस धरती पर जीवन कायम रहना असंभव है। प्रत्येक युग में सियाने महापुरुष मनुष्य-मात्र को इस वास्तविकता के मद्देनज़र वनस्पति के विकास-विगास का अमूल्य लाभ लेने और इसके विकास-विगास में बाधा न बनने हेतु आदर्श अगुआई प्रदान करते आ रहे हैं। 'पीओ दादे' के अमूल्य खजाने सर्वसांझी गुरबाणी में कई विभिन्न प्रसंगों में मनुष्य मात्र को वनस्पति की आदर्श संभाल एवं उपयोगिता संबंधी सुचेतना बख़्शी गई है। उस युग में जबकि वनस्पति को आज की वर्तमान स्थिति जैसी संकट-स्थिति का सामना न था, दसों गुरू साहिबान, सिख संगतों तथा जन-साधारण को वनस्पति उपजाने एवं इसकी संभाल के संबंध में विशेष आदेश-निर्देश देते रहे हैं। हमारे गुरू साहिबान की पावन स्मृति में कई गुरुद्वारे वृक्षों के नाम से शोभायमान देखने-पढ़ने-सुनने में आते हैं, जैसे जंड साहिब, किक्कर साहिब, झाड़ साहिब टाहली साहिब, पिपली साहिब, तूत साहिब, टाहलीआणा साहिब, वण साहिब, बेर बाबा बुड्ढा साहिब, दुख भंजनी बेरी आदि। ये सभी हम सबको गुरू-घर और वृक्षों की गहरी सांझ की अनुभूति देते प्रतीत होते हैं। यह ज्ञात हो कि सिख मत में वृक्षों की पूजा-उपासना का विधान नहीं है, परंतु इसमें इनका दिलो-जान से पोषण करने के लिए मार्गदर्शन अवश्य किया गया है जो वृक्षों के प्रति भावुक प्रेम-भाव के साथ-साथ व्यवहारिक दृष्टि को प्रकट करता है।

श्री गुरू हरिराय साहिब जी का वनस्पति-प्यार उमड़ कर प्रकट होता दीखता है। इस संबंध में उनके बालपन में से एक घटना विशेष रूप से वर्णन की गई है। उपलब्ध विवरण के अनुसार जब आप बगिया में से गुजर रहे थे तो आपके चोगे से टकराकर एक फूल की पत्तियां अलग होकर गिर पड़ीं। बाल (गुरू) हरिराय जी के नेत्रों में आंसू आ गए। इस अवसर पर गुरू हरिगोबिंद साहिब ने सहज भाव से कथन किया कि 'बेटा जी! जब चोगा बड़ा पहना हो तो संभल कर चलते हैं!' आज्ञाकारिता की प्रतिमा (गुरू) हरिराय जी ने गुरू-पिता द्वारा सहज भाव से किया यह कथन, गुरू-हुक्म सदैव स्मर्ण रखा। जब वे गुरगद्दी पर शोभायमान हुए तो आपने एक वन-वाटिका बनवाई जिसमें वन-जीवों को सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान किया। गुरू जी ने रोगियों के उपचार हेतु जो औषधालय खोला व संचालित किया उसमें जंगली जड़ी-बूटियों से निर्मित दुर्लभ औषधियां विद्यमान थीं। यह स्मर्ण रहे कि इसी औषधालय से निरवैरता की प्रतिमा गुरू जी द्वारा बख़्शी औषधि पाकर बादशाह शाहजहां का पुत्र दारा शिकोह रोग-मुक्त हुआ। आज जब हम केमिकल रासायनों पर निर्भर कर रहे हैं तब हमें जड़ी-बूटियों द्वारा कारगर उपचार होने की वास्तविकता को फिर से आजमाने की दिशा में चलने की आवश्यकता है।

गत दशकों में हमारे देश में जंगलों की कटान का कार्य अनावश्यक तीव्र गति से चलाया गया जिससे

वातावरण में प्राकृतिक समतोल डगमगा चुका है। इसे फिर से समतोल में लाने हेतु सभी संभव-संभावी स्तरों पर भरपूर प्रयास होने चाहिएं। इस संबंध में धर्म प्रचार-प्रसार में कार्यरत संस्थाओं-संगठनों अथवा उनके कर्मियों को विशेष प्रयास करने में अपना बनता कर्त्तव्य निभाने से नहीं चूकना होगा। गुरुद्वारों में वनस्पति संभाल हेतु विशेष परियोजनाएं आरंभ हो सकें तो यह समय के अनुकूल अच्छा कदम होगा। हमें यह मानना पड़ेगा कि गत समय में जाने-अनजाने में गुरुद्वारों में पहले से विद्यमान वनस्पति को गुरुद्वारों के भवनों एवं परिसरों के सौंदर्यकरण के नाम पर मिटाने की भूलें हुई हैं जिनको शोधने-सुधारने का यह समय है। इस संबंध में श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर के परिसर में गत कुछ ही समय से एक भरसक प्रयास आरंभ हो चुका है। परिक्रमा में बरामदों की छतों पर भव्य गमलों में बड़े आकार के पौधे शोभा दे रहे हैं। देश-विदेश में शोभायमान गुरु-घर के प्रबंधकों के लिए इसका अनुकरण किया जाना उत्तम होगा। इसके साथ-साथ ऐतिहासिक गुरुद्वारों में जो वृक्ष अभी अस्तित्व में हैं उनकी सेवा-संभाल के लिए हरेक संभव प्रयास आवश्यक हैं। इसके लिए प्रेरणा-स्रोत के रूप में हमारे पास श्री दरबार साहिब परिसर में बेर बाबा बुड्ढा जी, दुखभंजनी बेरी और इलायची बेर आदि की आदर्श उदाहरणें हैं। किसी अच्छी उदाहरण को समक्ष रखना सदैव ही उपयोगी होता है।

बेलें, नन्हें, मध्यस्थ तथा बड़े आकार की विभिन्न फूल व कलियां और सुंदर पत्तियां दर्शाने वाले पौधे और फल एवं छायादार वृक्ष, घास के रूप में पसरा भूमि पर प्राकृतिक बिछौना आदि सभी अपनी-अपनी जगह उपयोगी हैं। उन सभी को कायम रखना मानव जाति के महान भले हेतु है। आओ! पेड़-पौधों को प्यार करें, इन्हें उत्पन्न करने में सहायक होएं, इनका आदर्श पोषण करें। इनसे मानव जाति की आदि-जुगादी सांझ है, जिसको पहचानना आज की मुख्य आवश्यकता है। १७वीं सदी के चिंतक थामस फूलर ने कहा कि "वह जो पौधों को प्यार करता है, अपने आप के अतिरिक्त दूसरों को प्यार करता है।" जायस किलमर का कथन है, "मेरा ऐसा सोचना है कि मैं कदापि इतनी प्यारी कविता नहीं देख पाऊंगा जितना प्यारा एक वृक्ष होता है।" कवि जार्ज पोप मोरिस सम्बोधित करते हैं लकड़ी काटने वाले को कि "ऐ लकड़हारे! उस वृक्ष को मत काट, उसने मुझे पाला व संभाला है, मैं तो अब इसकी रक्षा करूंगा ही!" ऐसे ही संकल्प को वृक्षों के प्यार करने वाले सत्यवादियों ने समय-समय अमल या व्यवहारिक रूप में मूर्तिमान करके भी दिखलाया चाहे उनको इसके लिए अपनी जानें भी कुर्बान करनी पड़ीं। चिपको लहर में वृक्ष प्रेमी वृक्षों से चिपक गए कि आप हमें काटकर उसके बाद ही इस वृक्ष को काट सकेंगे! कवि श्री रवींद्र नाथ टैगोर ने कहा है कि "वृक्ष को भूमि से अलग करना, उसकी स्वतंत्रता नहीं बल्कि मृत्यु है।" पंजाबी कवि श्री शिव कुमार बटालवी के ये प्रिय बोल हमें वृक्षों से प्यार का संदेश दे रहे हैं:

कुझ रुक्ख मैनूं पुत्त लगदे ने, कुझ रुक्ख लगदे मावां।
कुझ रुक्ख नूंहां-धीआं लगदे, कुझ रुक्ख वांग भरावां।
कुझ रुक्ख मेरे बाबे वाकण, पत्र टावां-टावां।
कुझ रुक्ख मेरी दादी वरगे, चूरी पावण कावां। . . .
रुख तां मेरी मां वरगे ने, जीउण रुक्खां दीआं छावां।

गुरु-फरमान *'सगल बनराइ फूलंत जोती'* में वनस्पति के साथ आदि-जुगादी मानव-प्यार का भाव निहित है। आओ! समस्त वनस्पति से अपने द्वारा भुला दिया प्यार-संबंध फिर से जोड़ें और वनस्पति की संभाल के प्रति गुरू की निर्मल शिक्षा को अपने मन-मष्तिष्क में बसाकर अपना तथा समस्त मानव जाति का कल्याण सुनिश्चित करें। ■

संपादकीय नोट

माननीय लेखक साहिबान के प्रति कुछ विनतियां

किसी पत्रिका की सफलता में लेखकगण का आधारभूत योगदान होता है। हम 'गुरमति ज्ञान' के माध्यम से आज तक यदि अपने प्रिय पाठकों के लिए उपयोगी सामग्री प्रस्तुत कर सके हैं तो इसका मूल कारण हमें लेखकगण की ओर से प्राप्त होने वाला बहुपक्षीय सहयोग ही तो है। हम आवश्यकता महसूस होने पर अपने लेखकों के साथ पत्रव्यवहार तथा दूरभाष आदि संचार माध्यमों से संपर्क बनाते हैं, उनसे आवश्यकतानुसार आलेख लिखने का आग्रह करते हैं। हमें इस बात की संतुष्टि तो है ही इसके साथ-साथ गर्व भी है कि सभी लेखक साहिबान ने पत्रिका की आवश्यकता के अनुसार और समय पर विशेष आलेख भेजकर हमें धन्यवादी बनाया है। यहां हम अपने लेखक साहिबान के साथ 'गुरमति ज्ञान' की मूल नीति से सम्बंधित कुछ एक बातें सांझी कर रहे हैं, ताकि उनके द्वारा लिखकर भेजी गई सामग्री अधिक से अधिक शुद्ध रूप में हो जिसे उचित समय पर प्रकाशित करना संभव हो सके। यहां यह बताना आवश्यक है कि 'गुरमति ज्ञान' की मूल नीति के बारे में आवश्यक जानकारी की कमी के कारण कई बार लेखक साहिबान की ओर से भेजा गया आलेख पूर्णत: अनुकूल नहीं होता, उसे विवशता में फाईल में रखना पड़ता है। पत्रिका का त्रैमासिक से मासिक हो जाने पर नि:संदेह हमें अधिक आलेखों की आवश्यकता है परंतु मूल नीति या महत्वपूर्ण आधारों की अनदेखी किसी प्रकार भी नहीं हो सकती। ये विनतियां संक्षिप्त तथा संकेतक रूप से की जा रही हैं:

१. आलेखों में पावन गुरबाणी तथा उसकी आवश्यकता के अनुसार विचार-व्याख्या देने का प्रयास करें।
२. गुरबाणी श्री गुरू ग्रंथ साहिब में से लेकर उसके शुद्ध स्वरूप में लिखें। साथ पन्ना संख्या अंकित करना न भूलें।
३. सिख काव्य-ग्रंथों से ली गई पंक्तियों का मूल स्रोत, पन्ना संख्या, अध्याय आदि अवश्य लिखें।
४. विवाद वाले विषयों पर कृप्या न लिखें चूंकि 'गुरमति ज्ञान' का मूल उद्देश्य हिंदीभाषीय पाठकों को गुरबाणी के महान विरसे और गौरवमय सिख इतिहास से अवगत कराना तथा मानवता के कल्याण हेतु प्रेरित करना है।
५. तत्कालीन राजनैतिक-सामाजिक व्यवस्था पर सुधार के आशय से गुरबाणी के दिशा-निर्देश में रचनात्मक विचार, संकेतक रूप से की जा सकती है परंतु किसी व्यक्ति विशेष या

पार्टी विशेष की आलोचना या निंदा 'गुरमति ज्ञान' की नीति के अनुकूल नहीं है।

६. सामाजिक विषयों अथवा समस्याओं पर अवश्य लिखें परंतु उनके समाधान हेतु गुरबाणी के अनुकूल उदाहरण अवश्य अंकित करें। ऐसे विषयों पर सामाजिक समस्याओं के समाधान का आधार श्री गुरू ग्रंथ साहिब की गुरबाणी में दर्ज गुरू-उपदेश ही हो।

७. 'गुरमति ज्ञान' मुख्य रूप से गुरबाणी की खोज व विचार को समर्पित है। कृप्या प्राचीन ग्रंथों आदि में से उदाहरण देने के बारे में अधिक से अधिक संयम रखें। गुरबाणी के मूल भाव के विरोध में जाने वाली किसी भी प्राचीन या नवीन काव्य-पंक्ति को आलेख में शामिल न करें।

८. कृप्या उन गुरू-सपुत्रों, जो गुरमति विचारधारा से अलग रहे या इसके विरोधी रहे, के बारे में आलेख न भेजें।

९. सगुण भक्तिधारा से प्रभावित होकर अवतारों आदि के बारे में सामग्री न भेजें।

१०. ऐतिहासिक विषयों पर तथा गुरू साहिबान एवं सिख शख्सियतों के जीवन-वृत्तांत लिखते समय तिथि, सन्, संवत अवश्य लिखें और वे प्रमाणिक सिख-स्रोत या महान कोष कृत भाई काहन सिंघ नाभा से मिलान किये गए हों। आवश्यकता महसूस हो तो सहायक पुस्तकों की सूची भी दें।

११. रचना टाईप की हो या हाथ से पढ़ने योग्य साफ-स्पष्ट अक्षरों में लिखकर भेजें। कंप्यूटर द्वारा टाईप रचना **Font** सहित हमारे **email** पते पर भी भेजी जा सकती है। **email add: gyan_gurmat@yahoo.co.in**

१२. फोटो स्टेट रूप भेजने से गुरेज करें। यदि भेजना ही पड़े तो पूर्ण रूप से पढ़ा जाने योग्य हो।

१३. यदि आपने कोई रचना भेजी है और वह अभी प्रकाशित नहीं की जा सकी तो उसकी प्रकाशना की प्रतीक्षा करते रहने की बजाय आपसे और रचनाएं समय-समय भेजते रहने का आग्रह है।

१४. तिथिबद्ध रचनाएं प्रकाशन तिथि से कम से कम दो मास पूर्व भेजने का प्रयास करें।

१५. अधिक विस्तृत आलेख भेजने से गुरेज करें। संक्षिप्त तथा भावपूर्ण एवं प्रभावशाली आलेख भेज कर कृतार्थ कीजिए।

१६. 'गुरमति ज्ञान' के साथ जुड़ रहे नए लेखक साहिबान को विनय है कि वे 'गुरमति ज्ञान' की नीतियों से पूर्णत: अवगत होने के लिए हर माह 'गुरमति ज्ञान' पढ़ा करें ताकि उनकी रचनाओं में और अधिक निखार आए।

■

युग-दृष्टा श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी

*-स. गुरबख्श सिंघ 'प्यासा'**

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का प्रकाश २३ पौष सं. १७२३ (२२ दिसंबर, १६६६ ई.) में माता गुजरी जी की कोख से पटना साहिब में हुआ। उन दिनों आपके पिता श्री गुरू तेग बहादर जी गुरमति प्रचार के लिए ढाका में थे। आपकी आज्ञानुसार बालक का नाम गोबिंद राय रखा गया। श्री गुरू तेग बहादर जी ढाका से बंगाल और आसाम होते हुए पटना से होकर अकेले ही पंजाब चले गए। पंजाब आकर आपने 'आनंदपुर' नाम का नगर बसाया और फिर अपने परिवार को आनंदपुर (पंजाब) बुला लिया। इस प्रकार बाल गोबिंद राय के प्रथम पांच वर्ष पटना में ही बीते। यहीं आपकी विद्या शुरू हुई। आप बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के थे और निडरता जैसे आपको जन्म-घुट्टी में ही मिली हुई हो। आनंदपुर आने के बाद आपके लिए गुरमुखी के साथ संस्कृत और फारसी की पढ़ाई का प्रबंध किया गया। शास्त्र-विद्या के साथ आपके पिता जी ने (जो स्वयं तलवार के धनी थे) शस्त्र-विद्या, जैसे तलवारबाजी, तीरंदाजी, घुड़-सवारी, कुश्ती आदि सिखाने का विशेष प्रबंध किया।

प्रथम त्याग : बाल गोबिंद राय अभी मात्र नौ साल के ही थे कि आपके पिता श्री गुरू तेग बहादर जी ने अपने आप को कश्मीर के पंडितों की गुहार पर, उनका धर्म बचाने के लिए, औरंगजेब की धर्मान्धिता के सामने बलिदान के लिए प्रस्तुत कर दिया। त्याग का पहला पाठ, पुत्र का पिता को परहित के लिए, बलिदान के लिए, स्वयं प्रेरित करने और सहर्ष स्वीकार करने से शुरू हुआ।

पिता के बलिदान के उपरांत चुनौतियां : जब आपने गुरगद्दी संभाली तब आप मात्र नौ वर्ष के थे। अगुआ के रूप में आपके सम्मुख दो मुख्य चुनौतियां थीं। एक थी मुगलिया ताकत, जिसकी बागडोर स्वमत के कट्टर आग्रही औरंगजेब के हाथ में थी, जो अन्य धर्मावलंबियों को इस्लाम में तबदील अथवा मलियामेट करने पर उतारू था। दूसरी चुनौती स्वर्ण जाति के हिन्दुओं अर्थात ब्राह्मणों, क्षत्री राजाओं एवं राजपूतों से थी, जो यह मान बैठे थे कि यदि सिख मत फैलता गया तो उनकी प्रभुता छिन जाएगी। इसके अलावा उनके कई संबंधी भी ईर्ष्यावश उनके विरोधी बने हुए थे।

आपने अन्याय एवं अत्याचार का विरोध करने के लिए एक ऐसी संपूर्ण कौम तैयार करने का फैसला किया जो संत-सिपाही हो, जिसके मन में ईश्वर का भय और भाव (प्यार) हो, जो अन्याय, जब्र, जुल्म से टक्कर लेने के लिए सिर-धड़ की बाजी लगा दे, जिसके मन में दीन-दुखियों के लिए प्यार हो और जो सरबत के भले के लिए सदैव तत्पर हो।

उपचार : लोगों में भीरुता दूर करने और अन्याय का मुकाबला करने के लिए, साहस का संचार करने हेतु आपने वीर रस के साहित्य की रचना की। आपने अपने दरबार में कई

**49, New Idgah Colony, Agra-282001*

कवियों को आश्रय देकर, उनसे विपुल मात्रा में पौराणिक शौर्य-गाथाओं की लोक-भाषा में रचना करवाई। इन कवि-रत्नों की गिनती ५२ बताई जाती है।

कुछ सिख विद्वानों को संस्कृत भाषा सीखने के लिए बनारस भेजा। कालांतर जिन्होंने धर्म-प्रचार के कार्य में बहुत योगदान दिया, जो बाद में 'निरमले' कहलाए।

नाहन के राजा मेदनी प्रकाश के निमंत्रण पर यमुना नदी के किनारे पाऊंटा साहिब में एक किले का निर्माण किया। पाऊंटा साहिब में प्रवास के दौरान आपने साहित्य-रचना की ओर विशेष ध्यान दिया। अपने प्रभाव से नाहन के राजा मेदनी प्रकाश और श्रीनगर (गढ़वाल) के राजा फतहशाह की लम्बे समय से चली आ रही शत्रुता को मिटा कर दोनों में मित्रता करवाई।

यहीं पर साढौरा के पीर सैयद बुद्धू शाह आपके दर्शनों को आए और आपके शिष्य बने। भंगाणी के युद्ध में इन्हीं पीर जी के दो पुत्र और कई मुरीद गुरू जी की ओर से लड़ते हुए शहीद हुए थे।

भंगाणी का युद्ध : भंगाणी का युद्ध जो १६८९ ई में हुआ था, गुरू जी को रक्षार्थ लड़ना पड़ा। इस युद्ध में पहाड़ी राजाओं को मुंह की खानी पड़ी।

नादौन का युद्ध : एक वर्ष बाद ही गुरू जी को नादौन के युद्ध में हिस्सा लेना पड़ा। विडंबना यह है कि यह युद्ध गुरू जी को पहाड़ी राजाओं की विनती पर उनकी सहायतार्थ शाही जरनैल अलफ खां से लड़ना पड़ा। इस युद्ध में भी गुरू जी विजयी रहे।

हुसैनी युद्ध : अभी पांच वर्ष भी नहीं बीते थे कि पहाड़ी राजाओं ने गिरगिट की तरह रंग बदल लिया। पिछली हार का बदला लेने के लिए जब शाही जरनल हुसैन खां ने गुरू जी पर चढ़ाई की तो यही पहाड़ी राजे मुगलिया फौजों के साथ मिल गए। इस युद्ध में हुसैन खां और कुछ पहाड़ी सरदार मारे गए और फौज पीठ दिखा कर भाग गई।

१६९६ ई में औरंगजेब ने अपने पुत्र शहजादा मुअज्जम की कमान में शाही फौज पंजाब के लिए रवाना की। शहजादे ने लाहौर जाकर मिर्जा बेग को पहाड़ी राजाओं और गुरू जी के साथ लड़ने हेतु भेजा। पहाड़ी राजाओं से निपट कर जब उसने गुरू जी की ओर रुख किया तो उसकी मुलाकात भाई नन्द लाल जी (जो गुरू जी के सिख बनने से पहले शहजादा मुअज्जम के मीर-मुंशी थे) से हुई। भाई नन्द लाल जी ने जब उनको सही स्थिति से अवगत कराया तो वह फौज के साथ वापिस लौट गया। इस तरह यह युद्ध टल गया।

खालसा पंथ की सृजना : श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी की एक अन्य अद्वितीय देन 'खालसा पंथ की सृजना' कहा जाएगा। यह ऐतिहासिक दिन था, ३० मार्च १६९९ ई। सदियों से दबी-कुचली एवं त्रिस्कारित जातियों को मिलाकर एक ऐसी अद्वितीय कौम तैयार की, जो किसी ने कल्पना भी नहीं की होगी। वे लोग, जो अपनी ही आहट पर चौंक कर डर जाते थे, उनमें ऐसा साहस और निर्भीकता भर दी कि वे साहसिकता के प्रतीक बन गये।

श्री गुरू नानक देव जी के *'पंच परवाण पंच परधानु'* के अनुसार पूर्ण-उत्सर्ग की कसौटी पर लगभग ८० हजार के विशाल जन-समूह में से पांच व्यक्ति उभर कर सामने आए, जिन्हें गुरू जी ने खंडे-बाटे का अमृत-पान कराकर 'सिंघ' सजाया और उन्हें 'पांच प्यारों' की उपाधि दी। ये पांच प्यारे भारत के भिन्न-भिन्न प्रांतों

और जातियों के थे।

गुरू और चेलों में अभेदता : फिर एक विलक्षण दृश्य देखने को आया, जब गुरू जी ने स्वयं याचक बनकर उन पांच प्यारों के समक्ष स्वयं को अमृत-पान करवाने की याचना की। गुरू और चेले आपस में अभेद हो गये। फिर अन्य अभिलाषियों को पांच-प्यारों ने अमृत-पान करवाकर खालसा स्वरूप की दीक्षा दी।

इस प्रकार एक वर्ण, एक जाति (खालसा) का जन्म हुआ। पुरुषों को **'सिंघ'** और स्त्रियों को **'कौर'** (कुंवर) की उपाधि से विभूषित किया गया। उसी दिन गुरू गोबिंद राय अमृत-पान करने के बाद गुरू गोबिंद सिंघ कहलाए। खालसा के लिए ऐसी आंतरिक एवं बाहरी रहितों एवं कुरहितों की मर्यादा निर्धारित की जिससे खालसा सहज जीवन जीते हुए संत-सिपाही का जीवन चरितार्थ कर सके। वे एक अकाल पुरख के उपासक हों, दीन-दुखियों की सेवा के लिए सदा तत्पर हों, न किसी से डरें, न डरायें, न्याय एवं सद्भावना के पक्ष में हों और अन्याय एवं अत्याचार के प्रतिकार को अपने धर्म का अंग मानें, हक की कमाई करते हुए बांटकर खायें और सहज रूप में सत्याचारी जीवन बितायें। गुरू जी ने खालसा को अपना रूप कहा और अपनी सब सफलताओं का श्रेय खालसा को दिया।

गुरू साहिब के खालसा पंथ के सृजन से पहाड़ी राजे और भी अधिक भयभीत हो गए। उन्हें लगा कि इसके पीछे भी गुरू जी की कोई चाल होगी जबकि वे अच्छी तरह जानते थे कि पिछले युद्ध में गुरू जी ने विजय प्राप्त करने के बाद भी उनकी एक इंच भूमि पर कब्जा नहीं किया था और न ही उनसे युद्ध का कोई हर्जाना ही लिया था, फिर भी वे अपनी तंग-नज़री के कारण गुरू जी से बदला लेने की तरकीबें बनाने लगे। इसके लिए उन्होंने गुरू जी की बढ़ती शक्ति का डर दिखाकर सरहिंद के नवाब को हमला करने के लिए उकसाया।

१७०१ ई में सरहिंद के नवाब वजीर खां ने पैंदे खान और दीना बेग की कमान में दस हजार की फौज भेजी और लगभग बीस हजार की फौज पहाड़ी राजाओं के पास थी, परन्तु गुरू जी के पास मात्र सात-आठ हजार योद्धा ही थे। दोनों ओर की सेनाएं आपस में भिड़ गईं। युद्ध के दौरान पैंदे खां ने गुरू जी के सामने द्वन्द-युद्ध का प्रस्ताव रखा कि जो द्वन्द-युद्ध में जीत जाए उस पक्ष की विजय मानी जाए। उसे अपनी वीरता का बहुत घमंड था और उसे पूरा विश्वास था कि वह इस द्वन्द-युद्ध में गुरू जी को हरा देगा। गुरू जी ने पैंदे खां को पहले वार करने को कहा, परन्तु उसका पहला वार खाली गया। इसी प्रकार उसका दूसरा वार भी खाली गया। गुरू जी ने प्रथम वार में ही पैंदे खां को धराशाही कर दिया। यह देखकर शाही एवं पहाड़ी फौजें रणभूमि छोड़कर भाग गयीं।

कुछ दिनों बाद पहाड़ी राजाओं ने सैयद खां और अलफ खां को हमला करने के लिए राजी किया। विडंबना यह हुई कि इस बार युद्ध में सैयद खां गुरू जी के शौर्य से इतना प्रभावित हुआ कि उनका मुरीद बन गया और अलफ खां मैदान छोड़ कर भाग गया।

अब पहाड़ी राजाओं ने अपनी गुहार दिल्ली दरबार में लगाई। उन दिनों औरंगजेब दक्षिण में था, परंतु पंजाब में होती उथल-पुथल से वह भी चिंतित था। उसने सूबा सरहिंद को भारी फौज के साथ गुरू जी पर हमला करने का फरमान जारी कर दिया।

अब एक ओर लाखों की तादाद में शाही और पहाड़ी राजाओं की फौजें तो दूसरी ओर गुरू जी की लगभग दस हजार फौज। बहुत दिनों तक लड़ाई जारी रही, परन्तु कोई नतीजा न निकला। गुरू जी से आनंदपुर का किला खाली करवाने के लिए कूटनीति का सहारा लिया गया। कुरान शरीफ की सौगंध पर उन्हें आश्वासन दिया गया कि यदि वे किला खाली कर दें तो उन्हें शान्तिपूर्वक जाने दिया जाएगा। परन्तु जैसे ही गुरू जी ने अपने सैनिकों के साथ किला खाली किया उन पर पीछे से हमला कर दिया गया। एक तो कड़ाके की दिसंबर महीने की सर्द रात, दूसरा सामने उफनती हुई सरसा नदी। इस भगदड़ में गुरू जी के माता, माता गुजरी जी और दो छोटे सपुत्र साहिबजादा जोरावर सिंघ, साहिबजादा फतह सिंघ (आयु ७ और ५ वर्ष) अलग हो गए, जिन्हें उनके ही रसोईये गंगू ने लालच में आकर सूबा सरहिंद के हवाले कर दिया। सूबा सरहिंद ने उन्हें जिन्दा ही दीवार में चुनवा कर शहीद कर दिया, क्योंकि उन्होंने अपना धर्म छोड़ने से इनकार कर दिया था और गुरू जी की माता जी का सरहिंद के किले में देहावसान हो गया।

शेष इनसे बड़े सपुत्र साहिबजादा अजीत सिंघ—आयु १७ वर्ष और साहिबजादा जुझार सिंघ—आयु १५ वर्ष, चमकौर के युद्ध में जूझते शहीद हो गए।

परन्तु इनको गुरू जी ने ईश्वर की रजा मानकर खिले माथे स्वीकार किया और ऐसी अवस्था में भी आपने औरंगजेब को उसके अमानवीय कृत्यों और उसके सिपहसालारों का 'कुरान' की सौगंध खाकर वायदा-खिलाफी करने के बारे में जो पत्र लिखा उसे 'जफरनामा' अर्थात 'विजय-पत्र' का सिरलेख दिया और बादशाह को शर्मसार किया। यह रचना फारसी काव्या-कला का सुंदर नमूना मानी जाती है।

गुरू जी एक कवि के रूप में: श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी गुरमुखी, हिन्दी (बृज भाषा), संस्कृत, अरबी और फारसी के अच्छे ज्ञाता और एक उच्च कोटि के कवि थे। आपने भक्ति रस एवं वीर रस में समान रूप से बाणी रची। विषय के निरूपण में आपको कमाल हासिल था। यदि 'अकाल' की उसतति करते हैं तो ऐसे लगता है कि देश-काल की सीमा लांघ कर असीम में खो गए हों और यदि वीर, रौद्र एवं भयानक रस का शब्द-चित्र पेश करते हैं तो ऐसा लगता है कि दृश्य सजीव हो उठे हों। उपमाओं और अलंकारों का उपयोग देखते ही बनता है। उनकी कोई भी बाणी, चाहे 'अकाल उसतति' हो अथवा 'जापु साहिब', बृज, संस्कृत, अरबी एवं फारसी भाषाओं का सुमेल पाठक को आत्म-विभोर कर देता है। ईश्वर के अनगिनत ही गुणवाचक नाम प्रकट हो गए हैं। आपने अपनी बाणी में वहमों, भ्रमों, पाखंडों एवं थोथे कर्म-कांडों पर जोरदार एवं तर्कपूर्ण ढंग से प्रहार करते हुए मात्र एक अकाल पुरख की उपासना का निरूपण किया है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि किसी मानव में इतने गुणों का समावेश कल्पनातीत है।

मुक्तसर के युद्ध के बाद आपने लक्खी जंगल से होते हुए साबो की तलवंडी (दमदमा साहिब) ठिकाना किया। यहां आप लगभग नौ महीने रहे और १७०६ ई में आप राजपूताना होते हुए, जगह-जगह गुरमति का संदेश देते, बागौर पहुंचे। यहां आपको सूचना मिली कि औरंगजेब की दक्षिण में ही मृत्यु हो गई है।

अब दिल्ली के सिंघासन के लिए औरंगजेब के पुत्रों में युद्ध छिड़ गया। शहजादा मुअज्जम

(शेष पृष्ठ १८ पर)

संत-सिपाही गुरू गोबिंद सिंघ जी

*-डॉ. गुरचरण सिंघ**

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का सम्पूर्ण जीवन-काल अन्याय, अत्याचार, दमन तथा आतंकवाद के खिलाफ संघर्षमयी रहा है। गुरू जी जीवन-पर्यन्त युद्धरत रहे परंतु इससे उनके धार्मिक दृष्टिकोण तथा संत-स्वभाव पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। आवश्यकता पड़ने पर उन्होंने तलवार का उपयोग किया। जब सब तरह के शांति के प्रयास विफल हो जायें तो हाथ में तलवार पकड़ना अनिवार्य बन जाता है।

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने सिखों को अमृत-पान करा कर संत-सिपाही बना दिया। संत-सिपाही का अर्थ है, भक्ति और शक्ति का सुमेल। गुरू जी से पहले या तो संत मिलते हैं या फिर सिपाही। संत की आत्मा तो बलवान होती है, पर कुछ लोग उसके क्षम्य स्वभाव से अनुचित लाभ उठा लेते हैं। दूसरी तरफ सिपाही का लक्ष्य है युद्ध में राष्ट्र की रक्षा करना और शरीर को शक्तिशाली रखना। श्री गुरू नानक देव जी के सिद्धांतों को साकार करते हुए श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने भक्ति और शक्ति, माला और भाला, सत्य और सत्ता, शास्त्र और शस्त्र के संतुलन को कायम किया। यदि मनुष्य के पास शक्ति हो तो वह निर्भय होकर भक्ति कर सकता है और सत्य के मार्ग पर चल सकता है। इसके साथ ही शक्ति को काबू में रखने के लिए उस पर भक्ति का अंकुश रहना जरूरी है। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के अनुसार शास्त्र की रक्षा के लिए शस्त्र का होना अनिवार्य है, अन्यथा शास्त्र कभी भी खतरे में पड़ सकता है।

ऐतिहासिक बाल-लीलाएं : गुरू जी द्वारा पटना साहिब में की गई बाल-लीलाएं इतिहास का मुख्य अंग हैं। इससे सम्बंधित कई ऐतिहासिक स्थान आज भी श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के बचपन की याद दिलाते हैं। अपनी छोटी अवस्था में जीवन के कई दूरगामी कार्यों की पूर्ति हेतु एक कुशल सिपाही की भांति वे अपनी उम्र के छोटे-छोटे बच्चों के साथ शस्त्र-विद्या सीखने एवं सिखाने लगे। गुरू जी पटना साहिब की गलियों से दूर निकल जाते तथा तीर और तलवार चलाने का अभ्यास कराते। कभी-कभी बच्चों के दो दल बनाकर आपस में युद्ध कराते और राजा बनकर उनका न्याय करते।

आनंदपुर साहिब में गुरू जी के शौक : आनंदपुर साहिब आकर गुरू जी के शौक जैसे नेजाबाजी, तीरअंदाजी, तलवारबाजी, तैरना, घुड़सवारी और शिकार खेलना आदि थे। कलगी लगाने के कारण आपको कलगियां वाले भी कहा जाता है। दीवान में नगारा बजाया जाता था और सिख आपको बादशाह के नाम से सम्बोधित करते थे। एक निपुण सैनिक की तरह आपने सुरक्षा हेतु यहां किला भी बनवाया।

गुरगद्दी पर बैठना : १६७५ ई. में दशम पातशाह को आनंदपुर साहिब में गुरगद्दीनशीन होने के बाद, शहीद पिता जी को दिया प्रण याद था और गुरू जी ने अत्याचारों के विरुद्ध संघर्ष करने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु नवयुवकों में देश-प्रेम का जोश भरते और

**सी-६६, चन्द्रनगर, ए-ब्लाक, जनकपुरी, नई दिल्ली-११००५८*

उन्होंने उनको सैन्य-संचालन में भी प्रवीण करना आरंभ कर दिया। दूर-दूर से श्रद्धालु दर्शनार्थ आते और तरह-तरह की कीमती वस्तुएं भेंट करते।

संत (भक्ति) के गुण : संत के महान गुण गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपने पूजनीय पिता श्री गुरू तेग बहादर जी और संत तथा सिपाही के सद्गुण दादा श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी से विरसे में प्राप्त किये थे। आप जी अपने सिख की आत्मा को बलवान और फौलादी बनाना चाहते थे। उनकी आत्मा ऊंची और सुच्ची रखने के लिए आपने पांच बाणियों, जैसे जपु जी साहिब, जापु साहिब, त्व प्रसादि सवय्ये, चौपई पातशाही १० और अनंदु साहिब का पाठ नित्यप्रति करने का आदेश दिया। यह सब व्यक्ति की मानसिक शक्ति को बलवान करते हैं। संत की आत्मा का बलवान होना नितांत आवयश्क है।

युद्ध के कारण : भारत का पुरातन इतिहास इस बात की गवाही देता है कि देश में अधिकतर लड़ाइयों का कारण जर, जोरू या जमीन ही रहा। धन इकट्ठा करने के लिए पड़ोसी राज्यों के साथ, स्त्री का अपमान होने पर या फिर जमीन को हथियाने के लिए कई लड़ाइयां लड़ी गईं। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी को अपने जीवन में छोटी-बड़ी कई लड़ाइयां लड़नी पड़ीं, पर किसी एक का भी कारण इनमें से कोई एक भी नहीं था। जब सत्तावानों ने सत्य को दबाया, शक्ति के द्वारा भक्ति पर अंकुश लगाया, धर्म-परायण जन-मानस को एक तरफ मुगल सलतनत और दूसरी तरफ पहाड़ी हिंदू रजवाड़ों ने भेड़-बकरी की तरह हांका, तो मानवता की रक्षा के लिए गुरू जी युद्ध के मैदान में कूद पड़े। गुरू जी का लक्ष्य किसी देश पर विजय प्राप्त करना या राज्य स्थापित करना नहीं था, बल्कि उनका उद्देश्य भारत की पवित्र भूमि को अत्याचारियों से बचाना था। गुरू जी के युद्ध किसी धर्म या मजहब को लेकर नहीं बल्कि पाप, अत्याचार तथा भ्रष्टाचार के विरुद्ध थे। गुरू जी ने कभी अपना सिक्का नहीं चलाया और न ही कभी राज्य स्थापित करने की चेष्टा की, बल्कि अपने राष्ट्र की संस्कृति को विदेशी जरवाणों से बचाने के लिए अपने माता-पिता तथा चारों पुत्रों को भी कुर्बान कर दिया।

अभ्यंतर युद्ध : पंजाब में श्री गुरू नानक देव जी ने जिस परम्परा का सूत्रपात किया वह अपने चरित्र में भक्ति आंदोलन की सहवर्ती होकर भी कुछेक विलक्षण विशेषताएं रखती थी। गुरबाणी में अनेक स्थानों पर अभ्यंतर युद्ध के लिए जिन रूपकों का प्रयोग किया गया है वे वास्तविक रणभूमि के युद्ध का चित्र प्रस्तुत करते हैं। श्री गुरू नानक देव जी के कथनानुसार:

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ *(पन्ना १४१२)*

उपरोक्त बिम्ब-विधान इस बात की पुष्टि करता है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में संग्रहित भक्त कबीर जी की ये पंक्तियां भी मानसिकता के जुझारू तेवर को व्यक्त करती हैं:

सूरा सो पहचानिऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥
(पन्ना ११०५)

सिख धर्म में संघर्ष की महत्ता : सिख धर्म में जीवन-संघर्ष करने और न्याय की रक्षा करने की लिए प्राण देने की भावना को प्रेरित किया गया है। श्री गुरू नानक देव जी ने कहा है कि अपने हक के लिए मरने वाले शूरवीर का मरण ईश्वर के दरबार में पूरी तरह स्वीकृत होता है:

मरणु मुणसा सूरिआ हक है जो होइ मरनि परवाणो ॥
सूरे सेई आगै आखीअहि दरगह पावहि साची माणो ॥ *(पन्ना ५७९-८०)*

श्री गुरू अरजन देव जी फरमान करते हैं कि जो शूर है वही मुक्ति पाता है, जो इस संसार-युद्ध से भागता है वह आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है:

जो सूरा तिस ही होइ मरणा ॥
जो भागै तिसु जोनी फिरणा ॥ *(पन्ना १०१९)*

पांच प्रवृत्तियों पर नियंत्रण : इसमें संदेह नहीं कि गुरबाणी में आई ये पंक्तियां अधिकांशत: मनुष्य के अन्तर्जगत से सम्बंध रखती हैं, जिसमें साधक काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार जैसी प्रवृत्तियों से युद्ध करता है। श्री गुरू अमरदास जी का फरमान है:

नानक सो सूरा वरीआमु जिनि विचहु दुसटु अहंकरणु मारिआ ॥ *(पन्ना ८६)*

मानवीय प्रतिष्ठा : प्राय: यह देखने में आया है कि वाह्य जगत में शूरवीरता और सैनिक कर्म की आवश्यकता उस समय अनुभव होती है जब मानवीय प्रतिष्ठा संकट में पड़ जाती है। कुछ आक्रामक और शोषक शक्तियां अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए व्यापक मानव-समाज का शोषण करती हैं, उसे अपमानित करती हैं और उनका जीवन नरकवत् बना देती हैं। श्री गुरू नानक देव जी ने अपने समय के समाज को, जो आक्रान्ताओं और शोषकों के हाथों अपमानित होकर अपना जीवन व्यतीत कर रहा था, कहा था, अपना सम्मान खोकर जीना और मात्र जीवित रहने के लिए ही खाना-पीना सब हराम है:

जे जीवै पति लथी जाइ ॥
सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥ *(पन्ना १४२)*

सकारात्मक मूल्यों की प्रेरणा : युद्ध, हत्या, रक्तपात मनुष्य के नकारात्मक मूल्य हैं। मानवीय यात्रा का हर पड़ाव प्रयत्न करता है कि मनुष्य को इन नकारात्मक मूल्यों से निजात दिलायी जाये। जिस ढंग की व्यवस्था में मनुष्य जीवन व्यतीत कर रहा है उसके मनोविकार और प्रवृत्तियां उस पर नकारात्मक मूल्यों का प्रभाव डालती हैं। उसमें अधिकांश मानव समाज पीड़ित है और सम्पूर्ण मानवीयता संकट में पड़ जाती है। इस मानवीयता की रक्षा के लिए सिख परम्परा में अभ्यंतर जगत की युद्ध-भावना का वाह्य जगत तक ले जाना अनिवार्य समझा गया। श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी द्वारा दो तलवारों का धारण करना संत-सिपाही का उपयुक्त उदाहरण था। एक तलवार आन्तरिक युद्ध (पीरी) का प्रतिनिधित्व करती थी और दूसरी वाह्य जगत (मीरी) के संघर्षों का। दोनों एक-दूसरे की विरोधी नहीं पूरक बनीं। इसी मानवीयता की रक्षा में श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का 'संत-सिपाही' रूप चरितार्थ हुआ।

मानव-रक्षा : मानवता की रक्षा हेतु पहली शर्त मनुष्य की गरिमा की रक्षा करना है। मनुष्य को छोटा बनाकर कोई धर्म, कोई, दर्शन, कोई विचारधारा बड़ी नहीं बन सकती। मनुष्य का कल्याण, उसका सर्वपक्षीय विकास और उस विकास के लिए सामाजिक जीवन में अनुकूल वातावरण का निर्माण, ये उस गरिमा को स्थिर रखने, पुष्ट करने और उसकी अभिवृद्धि करने के सहायक तत्व हैं।

पांच प्यारों का चयन : श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने १६९९ ई वैसाखी के दिन पांच प्यारों का चयन किया। ये सभी अलग-अलग स्थानों और अलग-अलग जातियों के लोग थे। भाई दयाराम लाहौर का खत्री था, भाई धर्मदास दिल्ली के पास का जाट था, भाई मोहकम चंद द्वारिका (गुजरात) का धोबी था, भाई हिम्मत राय

जगन्नाथपुरी (उड़ीसा) का कहार था और भाई साहिब चन्द बीदर, दक्षिण भारत का नाई था। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने इन्हें लोहे के बाटे में लौह-अस्त्रों से स्पंदित 'अमृत' पिलाया। इस प्रकार भाई दया राम से भाई दया सिंघ, भाई धर्म चन्द से भाई धर्म सिंघ, भाई मोहकम चन्द से भाई मोहकम सिंघ, भाई हिम्मत राय से भाई हिम्मत सिंघ और भाई साहिब चन्द से भाई साहिब सिंघ में रूपान्तरित होकर 'पांच प्यारे' बन गये। स्वयं श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी अभी तक गुरू गोबिंद राय ही थे। उन्हें अपने आप को भी दीक्षित करना था। गुरू अपने ही शिष्यों के सम्मुख अंजुलि बनाकर झुक गये। 'पांच प्यारों' ने उन्हें उसी तरह 'अमृत' छकाया जैसे उन्होंने स्वयं गुरू जी के हाथों से छका था। अब गुरू जी गुरू गोबिंद राय से गुरू गोबिंद सिंघ जी बन गये। इतिहास में कोई ऐसी मिसाल नहीं कि एक गुरू अपने चेलों से अपने लिए अमृत की पाहुल मांग कर खालसा सजने के लिए बख्शिश मांग रहा हो। इसी लिए तो उनके लिए कहा जाता है:

वह प्रगटिओ मरद अगंमड़ा वरीआम इकेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥१७॥
(वार ४१)

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी अपने आप को ईश्वर का सेवक मानते हैं : श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अनुभव किया कि एक प्रभावशाली धार्मिक नेता कुछ ही समय में अपने अनुयाइयों द्वारा 'भगवान' बना दिया जाता है। वह स्वयं इस स्थिति को सहर्ष स्वीकार कर लेता है और अपने तथा अपने अनुगामियों के बीच कथित भगवान बन जाता है। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने कहा कि जो मुझे भगवान कहेगा वह नरक का भागी होगा। मैं तो तुम्हारी ही तरह परमेश्वर का एक सेवक हूं और उसी के निर्देशानुसार जगत में शुभ काम करने आया हूं:

जो हम को परमेसर उचरिहैं ॥
ते सभ नरक कुंड महि परिहैं ॥
मो कौ दास तवन का जानो ॥
या मै भेद न रंच पछानो ॥३२॥
मैं हो परम पुरख को दासा ॥
देखन आयो जगत तमासा ॥
जो प्रभ जगति कहा सो कहिहों ॥
म्रित लोक ते मोन न रहिहों ॥३३॥ (बचित्र नाटक)

ईश्वर समस्त का पालनहार है एवं सभी मनुष्य एक समान हैं : उन्होंने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति के अंदर एक ही ज्योति (ईश्वर) का निवास है, इसलिए भूलकर भी मैं किसी अन्य भेद को स्वीकार नहीं करता:

कोऊ भइओ मुंडीआ संनिआसी कोऊ जोगी भइओ
कोऊ ब्रहमचारी कोऊ जती अनुमानबो ॥
हिंदु तुरक कोऊ राफजी इमाम साफी
मानस की जात सबै एकै पहिचानबो ॥
करता करीम सोई राजक रहीम ओई
दूसरो न भेद कोई भूल भ्रम मानबो ॥
एक ही की सेव सब ही को गुरदेव एक
एक ही सरूप सबै एकै जोत जानबो ॥१५॥८५॥
(अकाल उसतत)

गुरू जी का स्वाभिमान : गुरू जी के व्यक्तित्व पर उनके महान आचरण का ही प्रभाव था। लाखों की संख्या में जनसाधारण उनके अनुयायी बने। अत्याचार एवं दमन के खिलाफ उनके द्वारा किए गए युद्धों का लम्बा सिलसिला चला, परन्तु जटिल से जटिल परिस्थितियों के बीच भी उनका साहस और धैर्य सदैव बना रहा। चारों पुत्रों, माता-पिता एवं असंख्य साथियों के मार्मिक बलिदान के बावजूद कभी न झुकने वाला उनका स्वाभिमान इस बात का प्रमाण है कि यदि गुरू जी के रूप में उनमें महान व्यक्तित्व का अवतरण न हुआ होता तो आज

भारतवर्ष का सामाजिक एवं सांस्कृतिक नक्शा ही कुछ और होता। ये सारे तथ्य श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी को संत-सिपाही का गौरव प्रदान करते हैं।

आदि ग्रंथ साहिब को गुरगद्दी : श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का अकाल पुरख के देश को गमन दक्षिण भारत में गोदावरी नदी के किनारे नांदेड़ के स्थान पर १७०८ ई को हुआ। अंतिम समय से पहले श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने एक महान ऐतिहासिक फैसला लिया। आप जी ने श्री गुरू अरजन देव जी द्वारा संपादित 'आदि ग्रंथ साहिब' को गुरगद्दी सौंपी और देहधारी गुरुओं की प्रणाली समाप्त कर दी:

आगिआ भई अकाल की तबै चलायो पंथ।
सब सिक्खन को हुकम है गुरू मानीओ ग्रंथ।
गुरू ग्रंथ को मानीओ प्रगट गुरां की देह।
जो प्रभु को मिलबो चहे खोज सबद मैं लेह।
(पंथ प्रकाश, ज्ञानी ज्ञान सिंघ)

ईश्वर से प्रार्थना : आज भी श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी द्वारा चंडी चरित्र में रचित एक शब्द भारतीय फौज और जी. आर. पी. राजस्थान के थानों में लिखा हुआ देखा जा सकता है। यह ईश्वर के चरणों में एक प्रार्थना है जो जनसमूह को अपने जीवन में अपनानी चाहिए। वह निम्नलिखित है:

देह सिवा बरु मोहि इहै,
सुभ करमन ते कबहूं न टरों ॥
न डरो अरि सो जब जाइ लरो,
निसचै करि अपुनी जीत करों ॥
अरु सिखहों आपने ही मन को,
इह लालच हउ गुन तउ उचरों ॥
जब आव की अउध निदान बनै,
अति ही रन मै तब जूझ मरों ॥२३३॥
(चंडी चरित्र)

साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व उनके द्वारा रचित साहित्य, उनके संत होने, उनके सिपाही होने का साक्ष्य भरता है। ऐसे संत-सिपाही को सद्-सद् प्रणाम! उनके प्रकाशोत्सव पर सभी संगत को बहुत-बहुत हार्दिक शुभकामनाएं।

कविता

नशा न करना!

*-डॉ सुरिंदरपाल सिंघ**

नशा न करना कभी, नशा न बने मजबूरी।
बड़ी इस बीमारी से, तुम रखना दूरी।
नशे की गुलामी इन्सान को, कर देती बरबाद।
न घर में इज्जत, न बाहर बीच समाज।
तन भी रोगी, मन भी रोगी,
प्यार भरी कोई देता नहीं आवाज।
निभाता नहीं नशेड़ी कोई जिम्मेवारी,
कर न पाता कोई भी अपना काज।
चलते-चलते असहाय होकर रहता,
क्या घर के, क्या बाहर के, हो जाते नाराज।
एक मोड़ ऐसा भी आकर ही रहता,
जर्जरा हो जाता तन-मन का साज।
ऐसी लत को फिर लगाना ही क्यों,
पारिवारिक जीवन को जो रख दे कर बर्बाद?
गुरदेव पातशाहों ने हमको क्या बतलाया?
लेकिन हमने मन इच्छा से क्या अपनाया?
आओ ऐसी राह चलें सब मेरे भाई,
जिस पर चलते देश कौम को,
होऐ हम पर नाज़!

*पत्तन वाली सड़क, पुराना शाला, गुरदासपुर।

हम इह काज जगत मो आए

-डॉ. मनजीत कौर*

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपने जगत में आने के मकसद को स्पष्ट करते हुए 'बचित्र नाटक' के छठे अध्याय में इस तरह फरमान किया है:

हम इह काज जगत मो आए ॥
धरम हेत गुरदेव पठाए ॥
जहां तहां तुम धरम बिथारो ॥
दुसट दोखीअनि पकरि पछारो ॥४२॥
या ही काज धरा हम जनमं ॥
समझ लेहु साधू सभ मन मं ॥
धरम चलावन संत उबारन ॥
दुसट सभन को मूल उपारन ॥४३॥

गुरू पातशाह के कथनानुसार पिछले जन्म उन्होंने हिमालय पर्वत पर घोर तप किया, जिससे प्रसन्न होकर अकाल पुरख ने उन्हें अपना सपुत्र बनाकर धर्म-प्रचार हेतु तथा दुष्टों का दमन कर दीन-दुखियों की रक्षा हेतु संसार में भेजा।

जब श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी मात्र ९ वर्ष के थे तब उनके पिता श्री गुरू तेग बहादर जी के पास कश्मीरी पंडितों का एक शिष्टमंडल आया, जिसने गुरदेव के समक्ष अपनी पीड़ा को बयान किया कि किस तरह अत्याचारी औरंगजेब जबरदस्ती उन्हें धर्म-परिवर्तन को मजबूर कर रहा है और ऐसा न करने पर उन पर कितने जुल्म ढहाए जा रहे हैं। यह सब सुनकर गुरू जी निस्तब्ध रह गए। तभी बाल गोबिंद राय जी ने पिता जी से निस्तब्धता का कारण पूछा। गुरू जी ने सारा वृत्तांत बताया कि किस तरह किसी महापुरुष के बलिदान की आवश्यकता है। बाल गोबिंद राय जी का निर्भीकतापूर्ण उत्तर था—"पिता जी! आप से महान पुरुष इस समय दुनिया में कौन हो सकता है? आप कुर्बानी दो।" सपुत्र के मजबूत इरादों एवं देश-धर्म की रक्षा की भावना को देख पिता श्री गुरू तेग बहादर जी ने दिल्ली के चांदनी चौंक में अद्वितीय शहादत दी।

पिता जी की शहादत के बाद श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने गुरगद्दी संभाली। सन् १६९९ को वैशाखी वाले दिन अनंदपुर साहिब में एक कौतुक किया—दीवान की समाप्ति पर हाथ में नंगी तलवार तथा पांच सिरों की मांग। गुरू जी का ऐसा रूप पहले कभी किसी ने नहीं देखा था। सारी सभा में सन्नाटा छा गया। यह वह अटल सत्य था जिसे श्री गुरू नानक देव जी ने अपनी बाणी में पहले ही उजागर कर दिया था, यथा:

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

अर्थात् अगर तुम जीवन संग्राम रूपी खेल खेलना चाहते हो तो सिर हथेली पर रख कर आना।

उस सन्नाटे को चीरती सिंघ-गर्जना हुई—"कोई है जो अपना शीश अर्पण कर सके? ऐसा कोई सपूत जो प्राणार्पण के लिए तत्पर हो?" इस

*२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-४ (राजस्थान)

प्रश्न के उत्तर में बारी-बारी से विविध जातियों के पांच जन उठे और विनम्रता सहित विनती की कि "यह शीश आपकी ही अमानत है।" इन्हीं पांच सिखों को अमृत-पान करवाकर 'पांच प्यारों' की उपाधि से अलंकृत किया गया। तत्पश्चात नम्रता के पुंज गुरू जी ने स्वयं इन पांच प्यारों से अमृत-पान किया। गुरू जी स्वयं गुरू गोबिंद राय से गुरू गोबिंद सिंघ बने। अपने प्यारे खालसे को भी अपने नामों के साथ 'सिंघ' शब्द लगाने को कहा। गुरू जी ने खालसे को अपने जैसी 'सूरत' और 'सीरत' बख्शी।

स्पष्ट है कि लोकतन्त्र में सत्ता के विकेन्द्रीयकरण व समानता की जो बात आज की जाती है सर्वप्रथम श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने ही गुरू-शिष्य का भेद मिटा कर इसकी नींव रखी। भाई गुरदास जी ने इस तथ्य को कितने सुन्दर शब्दों मे अभिव्यक्त किया है:

वह प्रगटिओ मरद अगंमड़ा वरीआम इकेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥१७॥
(वार ४१)

खालसा पंथ की सृजना, ईश्वर की मौज तो थी ही इसके साथ-साथ यह समय की मांग भी थी इससे भारत के इतिहास में नया मोड़ आया। विभिन्न प्रांतों, जातियों, बोलियों तथा विभिन्न धर्मों को मानने वालों को एक ही बर्तन से अमृत-पान करवा कर सदियों से भारत को दीमक की तरह चाट रही जाति-प्रथा पर कुठाराघात किया तथा समाज में दीन-हीन समझे जाने वाले लोगों को अमृत-पान करवा कर 'मर्द-ए-कामिल' बना दिया जिसने जालिमों के साथ हुई जद्दोजहद में बेमिसाल कुर्बानियां दीं।

विश्व इतिहास में असंख्य दानी हुए हैं— मन के, तन के तथा धन के, लेकिन इतिहास गवाह है कि कोई श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी जैसा सरवंश का दानी कोई नहीं हुआ। उन्होंने ९ वर्ष की आयु में पिता की कुर्बानी दी। अपने दो बड़े साहिबजादों को स्वयं तैयार कर युद्ध-भूमि में भेजा तथा चमकौर की गढ़ी में अपने सामने रणभूमि में शहीदी का अमर जाम पीते देखा। दो छोटे मासूम साहिबजादों, जिगर के टुकड़ों को धर्म की खातिर नीवों में चिनवा कर, कौमी महल की नीवें मजबूत कीं। एक शायर लिखता है:

थम्मीआं दी थां उहने पुत्तां दीआं हड्डियां।
सिक्खी महल थल्ले, चाईं-चाईं गड्डियां।
देश दुखां दा सी मारा, दे के ओसनू सहारा,
गऊआं छुरियां दे थल्लिओं छुडाइयां।
माता गुजरी नूं देवों नी वधाइआं।
चंन चमके ते मत्था पिआ दमके,
अज्ज पटने शहर विच होइआं रोशनाइयां।
माता गुजरी नूं देवो नी वधाइआं।

यही नहीं आपने पूजनीय माता जी तथा प्राणों से प्रिय अनेकों सिखों को देश-धर्म हेतु कुर्बान कर दिया। यही नहीं उनका दृढ़ विश्वास *'जो किछु है सो तेरा'* पर सदैव कायम रहा। उन्होंने तन-मन-धन सर्वस्व देश-कौम हेतु कुर्बान कर दिया।

समूची मानवता में उस ईश्वर का दीदार करने वाले गुरू साहिब मानव-प्यार को ही सच्ची उपासना मानते हैं, इसलिए उनकी लड़ाई जर-जोरू-जमीन के लिए कभी न थी और न ही किसी धर्म विशेष के विरुद्ध थी। इसी तथ्य को स्पष्ट करते उनके पावन शब्द, उनके मानवतावादी दृष्टिकोण के परिचायक हैं-

हिंदु तुरक कोऊ राफजी इमाम साफी
मानस की जात सबै एकै पहिचानबो ॥
(अकाल उसतत)

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी की एक अनन्य

मिसाल कि वे दशम पिता, कलगीधर पातशाह, दुष्ट-दमन, अमृत के दाते, सरवंशदानी, संत-सिपाही, दार्शनिक, उच्च कोटि के कवि, कवियों के संरक्षक जैसे नामों से जाने जाते है। एक ईश्वर की उपासना पर बल देने हेतु आपने अवतारवाद का खंडन करके हिदायत दी कि-

जो हम को परमेसर उचरिहैं ॥
ते सभ नरक कुंड महि परिहैं ॥
मो कौ दास तवन का जानो ॥
या मै भेद न रंच पछानो ॥३२॥
मै हो परम पुरख को दासा ॥
देखन आयो जगत तमासा ॥ (बचित्र नाटक)

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने वीर रस की जोशीली बाणी से पराजित व आतंकित लोगों की सोई ताकत को पुन: जागृत किया। उन्होंने दृढ़ आत्म-विश्वास एवं प्रबल इच्छा-शक्ति को इस तरह स्पष्ट किया:

गिद्दड़ों से मैं शेर बनाऊं।
चिड़ियों से मैं बाज तुड़ाऊं।
सवा लाख से एक लड़ाऊं।
तबै गोबिंद सिंघ नाम कहाऊं।

वस्तुत: कलगीधर पातशाह सम्पूर्ण जीवन को मानव जाति के कल्याण एवं धर्म प्रचार को समर्पित कर संवत् १७६५ को महाराष्ट्र के नगर नांदेड़ में ज्योति-जोत समा गए।

इस तरह एक कर्मयोगी ने महान व उच्च करनी से सरवंश देश-धर्म हेतु कुर्बान कर जो मिसाल कायम की वह संसार में और नहीं मिलती। ■

युग-दृष्टा श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी

(पृष्ठ १० का शेष)

(जो बाद में बहादुर शाह के नाम से विख्यात हुआ) ने अपने भूतपूर्व मीर मुंशी भाई नन्द लाल जी द्वारा गुरू जी से सहायता मांगी। गुरू जी ने भाई धर्म सिंघ की अगुवाई में सहायतार्थ एक जत्था भेजा। जून १७०७ ई में आगरा के समीप जाज्यु में हुए युद्ध में बहादुर शाह की जीत हुई और उसका भाई शहजादा आज़म मारा गया। कृतज्ञता प्रकट करते हुए बहादुर शाह ने गुरू जी को सम्मानस्वरूप बहुमूल्य भेंट प्रदान की और वह गुरू जी को अपने साथ दक्षिण की ओर ले गया। सितंबर १७०८ में गुरू जी नांदेड़ में टिक गए। यहीं उनकी माधो दास बैरागी से मुलाकात हुई, जो अमृत-पान कर बाबा बंदा सिंघ बहादुर कहलाया, कालांतर जिसने गुरू जी से आशीर्वाद लेकर सूबा सरहिंद को उसके अमानवीय व्यवहार का दंड दिया और श्री गुरू नानक देव जी एवं श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के नाम पर सिक्का जारी किया।

उधर गुरू जी से बहादुर शाह की मैत्री के समाचार मिलने पर सूबा सरहिंद ने गुरू जी को मारने के लिए दो पठानों को नांदेड़ भेजा, जो श्रद्धालु बनकर गुरू-दरबार में आने लगे। एक दिन शाम के समय जब गुरू जी विश्राम कर रहे थे तो एक पठान ने घात लगाकर गुरू जी के छुरा घोंप दिया। वह दूसरा वार करने वाला था कि गुरू जी ने तलवार के वार से उसका काम तमाम कर दिया और दूसरे पठान को सिखों ने मार दिया। यह घातक चोट जानलेवा साबित हुई।

देहावसान : ७ कार्तिक सं. १७६५ (७ अक्तूबर, १७०८ ई) को गुरू जी ज्योति जोत समा गए। इससे पहले आपने देहधारी गुरू की परंपरा को विराम देते हुए 'आदि ग्रंथ साहिब' को सदैव काल के 'गुरू-पद' पर आसीन कर दिया, जो आपकी गुरू नानक नाम लेवा सिखों पर विशेष कृपा एवं परोपकार का प्रमाण है। ■

अमृत के दाते : श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी जैसी बहुपक्षी शख्सियत का उदाहरण विश्व भर के पूरे इतिहास में कहीं नहीं मिलता। गुरू साहिब एक तरफ महाबली हैं तो दूसरी ओर पूर्ण संत (ब्रह्मज्ञानी)। उनकी दृष्टि में न तो कोई दुश्मन है और न ही कोई बेगाना। वे दया के महा समुद्र हैं और बख्शिशों के बड़े भंडारों के मालिक। एक तरफ तो वे जुल्म, अत्याचार, पाप, अधर्म और सामाजिक- धार्मिक कानी बांट के खिलाफ, तलवार उठा कर, अत्याचारियों के साथ लोहा लेते हैं जबकि दूसरी ओर पूरी मनुष्यता में एक ज्योति की विद्यमानता को देखते हुए, भाई कन्हैया जी जैसे परोपकारी सिख को शाबाश देकर, जल छकाने के साथ-साथ घावों पर लगाने के लिए मरहम भी देते हैं। उनके चेहरे का तेज प्रताप इतना प्रचंड है कि दुश्मन उनकी ओर निगाह भर कर भी नहीं देख सकता। सैद खां जैसे जरनैल उनके सामने आकर, निर्बल होकर चरणों पर गिर पड़ते हैं। औरंगजेब जैसे कट्टर पत्थर-दिल उनकी कलम के एक मात्र वार (जफ़रनामा) से थर-थर कांपते फिरते हैं। अकाल पुरख का दास कहलाने वाले ये महान संत-जरनैल रब्बी हुक्म से खंडे-बाटे के अमृत से ऐसी 'अकाल पुरख की फौज' की सृजना करते हैं, जो सदा ही दीन-दुखियों की रक्षक, दुष्टों की विनाशक, निआसरों का आसरा बनती है। वे सब प्रकार के विकारों से रहित हैं, सभी प्रकार के गुणों वाले अथाह समुद्र हैं। उनको सिख भी उतने ही प्यारे हैं जितने कि सपुत्र विशाल हृदय में सदीवी प्रभु-शुक्राना है। *'चार मूए तो किआ हुआ जीवत कई हजार'* जैसी विलक्षण और बड़ी ऊंची सोच के मालिक श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के महाबलि रूप का साहित्यकारों ने ज्यादा चित्रण किया है। उनके ब्रह्मज्ञानी अर्थात निरंकार में अभेद होने का संत-स्वरूप हमारे इस लेख का विषय है।

श्री गुरू नानक देव जी से लेकर दसवें पातशाह श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी तक एक ज्योति, एकरूपता है। दसों पातशाहियों के आत्मिक स्वरूप, युगो-युग जगती ज्योति, गुरगद्दी पर सुशोभित श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी हैं। इसलिए जो उपदेश श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी का है, वो ही उपदेश श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का है। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी की बाणी में से कुछ उदाहरण बानगी मात्र प्रस्तुत हैं—

अकाल पुरख का चक्र, चिंन्ह, वर्ण, जाति, रूप, रंग, रेख-भेख कोई भी नहीं है। वो सदा ही स्थिर है, अजोनी है। करोड़ों देवता, भक्तजन, ऋषि-मुनि उसी का ही यश गा रहे हैं:

चक्क्र चिहन अरु बरन जाति अरु पाति नहिन जिह ॥
रूप रंग अरु रेख भेख कोऊ कहि न सकत किह ॥
अचल मूरति अनभउ प्रकास अमितोजि कहिज्जै ॥
कोटि इंद्र इंद्राण साहु साहाणि गणिजै ॥(जापु साहिब)

अकाल पुरख जल, थल, आकाश अर्थात

*पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केन्द्र, गुरदासपुर-१४३५२१

समूचे ब्रह्मांड में रमा हुआ है। वो सर्वकालीन, परिपूर्ण है। वो अनेकता में एक है। उसकी प्रकृति का कोई पारावार नहीं:

जले हैं ॥ थले हैं ॥ अभीत हैं ॥ अभे हैं ॥
प्रभू हैं ॥ अजू हैं ॥ अदेस हैं ॥ अभेस हैं ॥ (वही)

अकाल पुरख की सृजना का कोई अन्त नहीं। तीन लोक के राजा-महाराजागण, महातपी, देवते सभी उसी की रचना हैं। उसकी महिमा अति महान है:

राजान राज ॥ भानान भान ॥
देवान देव ॥ उपमा महान ॥८९॥ (वही)

पूरी सृष्टि का नाश करने वाला, उसकी सृजना करने वाला, सारे जीवों की जिंद-जान केवल प्रभु आप ही है:

सरबं हरता ॥ सरबं करता ॥
सरबं प्राणं ॥ सरबं त्राणं ॥१४३॥ (वही)

दो जहानों का मालिक, दया का स्वरूप सब जगह हाजरा हजूर है। वो हर प्राणी के सदा ही अंग-संग है:

दुकालं प्रणासी दिआलं सरूपे ॥
सदा अंग संगे अभंगं बिभूते ॥१९१॥ (वही)

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के अनुसार सच्चा सन्यासी वह है जो गुरू-उपदेश को अपने मन में बसाकर, नाम-सुमिरन की बिभूति मलता है। वह कम खाता और कम सोता है। उसके मन में दया हो और वह जत, सत, सब्र-संतोख का धारणी हो। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि का प्रभाव मन से निर्लेप रखे:

रे मन, ऐसो करि सनिआसा ॥ . . .
गिआन-गुरू आतम उपदेसहु; नाम बिभूत लगाओ ॥
अलप अहार सुलप सी निंद्रा; दया छिमा तन प्रीति ॥
सील संतोख सदा निरबाहिबो; हव्हैबो त्रिगुण अतीत ॥
काम क्रोध अहंकार लोभ हठ, मोह न मन मो लयावै ॥
तब ही आतम-तत को दरसै परम पुरुख कह पावै ॥ (रामकली, पा: १०)

दशमेश पिता जी के अनुसार सच्चा योगी वही है जो सादे पहरावे में जीवन व्यतीत करता हुआ जत और संयम वाला जीवन व्यतीत करके, गुरू-उपदेश को अपनी आत्मा में बसा लेता है। वह दिन-रात, श्वास-श्वास प्रभु-सुमिरन में लीन रहता है:

रे मन इह बिधि जोग कमाओ ॥ . . .
आतम-उपदेश भेसु संजम को; जाप सु अजपा जापै ॥
सदा रहै कंचन सी कायां; काल न कबहुं बयापै ॥ (वही)

गुरू जी का उपदेश है कि मनुष्य परम पुरख परमेश्वर को भूल कर, मोह, हउमै और लालच की गहरी नींद में सोया हुआ है। वह दूसरों को उपदेश तो करता है परंतु खुद उस पर नहीं चलता। वह सांसारिक कर्मों-भ्रमों में पड़ कर, धर्म-कर्म को भी भूल रहा है। सारे दुखों और पापों का नाश करने वाला केवल प्रभु-सुमिरन है। इसी को ही हृदय में श्वास-श्वास जपना चाहिए। नाम-सुमिरन की कमाई से सभी सुख प्राप्त हो जाते हैं:

संग्रहि करो सदा सिमरन को, परम पाप तजि भागो ॥
जा ते दूख पाप नहि भेटै, काल-जाल ते तागो ॥
जौ सुख चाहो सदा सभन कौ, तौ हरि के रसि पागो ॥ (वही)

एक अकाल पुरख के बिना और किसी की भी आराधना नहीं करनी चाहिए। अकाल पुरख सरब काल समरथ, घट-घट की जाननहार है:

(शेष पृष्ठ २८ पर)

विशेष खोज निबंध

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी तथा निर्मला सन्त-साहित्य

*-डॉ. निर्मल कौशिक**

सिख धर्म की गुरु परम्परा में सम्पूर्ण बाणी गुरमुखी लिपि में रखी गई है जिनमें अधिकांशत: रचनाएं ब्रज भाषा और पंजाबी की हैं। श्री गुरू तेग बहादर जी की दिव्य अनुभूतियों, आन्तरिक भक्तिपूरित एवं विमल ज्ञान संवतिल 'बाणी' अपनी अभिव्यक्ति-सादगी में रेखता जैसी सजीवता तथा दो-चार पंजाबी शब्द विभूति से युक्त होकर भी आधार भाषा की दृष्टि से शुद्ध रूप में तत्काली 'प्रतिष्ठित ब्रज' ही है।[१] उनकी बाणी एक प्रवाहात्मकता और प्रोढ़ता को लिए हुए है। इसके अतिरिक्त "चिन्तनधारा एवं धार्मिक विश्वासों की दृष्टि से पूर्ववर्ती सिख गुरुओं के अनुरूप होते हुए भी उसमें अनुभव की प्रमाणिकता तथा अनुभूति की तीव्रता के कारण ताज़गी और मार्मिकता है। उसमें सम्प्रेषण, प्रभावित तथा प्रेरित करने की अद्‌भुत क्षमता है।"[२] इसके अतिरिक्त अप्रमाणिक बाणी, निर्मला तथा उदासी सम्प्रदायों की बाणी, गुरु-भक्तों की रचनाएं, प्रेमाख्यानक, वीर तथा श्रृंगारिक रचनाएं उपलब्ध होती हैं। दशम पिता श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी की तथा उनके दरबारी कवियों की सम्पूर्ण बाणी इसी कोटि में आती है। तत्पश्चात् भाई संतोख सिंघ, भाई सुक्खा सिंघ, भाई कोइर सिंघ आदि मनीषियों ने भी इसी शैली में गुरमति साहित्य रचा। इसके अतिरिक्त गुरबाणी की व्याख्या हेतु अनेक विद्वानों ने टीका ग्रंथ रचे। आदर्श गुरसिख भाई गुरदास जी की बाणी को 'गुरबाणी की कुंजी' कहा गया है।[३] इसी प्रकार विद्वानों ने गुरबाणी की व्याख्या द्वारा गुरमति साहित्य में श्रीवृद्धि की है। "श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की अध्यक्षता, नेतृत्व तथा टीकाकारी के प्रशिक्षण द्वारा निर्मल और ज्ञानी साम्प्रदाय, टीका-टकसालें स्थापित हुईं जो अब तक चली आ रही हैं।"[४] इस प्रकार पंजाब में ब्रज भाषा में पर्याप्त साहित्य रचा गया। इस साहित्य की एक अन्य विशेषता यह है कि यह भारतीय परम्परा के अनुकूल है जिसमें वेदों, पुराणों, उपनिषदों तथा सूत्र ग्रंथों का सार तत्व विद्यमान है। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपने पांच शिष्यों को भारतीय संस्कृति एवं चेतना का स्वरूप जानने के लिए बनारस भेजा था। "साहित्य रचना का सम्पूर्ण कार्य आप प्राचीन भारतीय परम्परा के अनुसार रहकर कराना चाहते थे। निश्चय ही आप सारे वेद साहित्य से अपने साहित्यकारों को परिचित रखना उचित समझते थे।"[५] उनके ये शिष्य विद्यापार्जन कर जब वापिस लौटे तो इन्हें निर्मले कहा गया। 'निर्मल' फारसी शब्द 'खालिस' का संस्कृत पर्याय है। इस दृष्टि से निर्मल पंथ खालसा पंथ से भिन्न नहीं है। सभी निर्मल–पंथी लेखक अपने आप को खालसा पंथ का अभिन्न अंग मानते रहे हैं।[६] वास्तव में देखा जाए तो 'खालसा' और 'निर्मल' शब्द का अर्थ एक ही है। दोनों श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी द्वारा ही प्रचलित मत हैं। गुरू जी ने धर्म के दो मार्ग निर्धारित किए—प्रवृत्ति मार्ग और निवृत्ति मार्ग। प्रवृित्त मार्ग पर चल

**विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सरकारी बृजेंद्रा कॉलेज, फरीदकोट-१५१२०३, फोन: ०१६३९-२६३०१७*

कर सिख परम्परा को निभाने वाले 'खालसा' तथा निवृत्ति मार्ग पर चलने वाले 'निर्मला' कहलाए। इसलिए दोनों में कोई अन्तर नहीं है। "जिस प्रकार सिख विद्वान श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी द्वारा प्रवर्तित खालसा पंथ को सिख मत से अभिन्न मानते हैं इसी प्रकार निर्मला पंथी विद्वान भी।"[७] निर्मले क्योंकि निवृत्ति मार्ग को अपना कर चले थे अत: उन्होंने विरक्त भाव से गुरमति सिद्धांतों को अपनाया। संस्कृत तथा हिंदी के विद्वान होने के कारण संस्कृत साहित्य एवं संस्कारों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था, अत: दोनों के मध्यस्थ बनकर इन्होंने गुरबाणी का प्रचार और व्याख्या की। गुरू-शिष्य परम्परा के अन्तर्गत पर्याप्त साहित्य रचना हुई। उस समय की साहित्यिक भाषा ब्रज थी। सभी महत्वपूर्ण विषयों पर ब्रज भाषा में ही साहित्य रचा गया। "निर्मले साधुओं का क्षेत्र चाहे भिन्न था परंतु उन्होंने इस शृंखला को बनाए रखा।"[८] उन्होंने सिख धर्म के सिद्धांतों के प्रचार एवं प्रसार हेतु पर्याप्त साहित्य रचा और स्थान-स्थान पर घूम कर अपने लक्ष्य की पूर्ति की। यह सिख धर्म का विद्वान अध्यापक वर्ग है जो अन्य गुरमुखों से अपना अलग स्थान रखता है। "संस्कृत ग्रंथों के अध्ययन के कारण ही निर्मले संतों के चिन्तन एवं उपासना-पद्धति में कुछ ऐसी विशिष्टता आ गई है कि वे सहज ही अन्य सिख जनता से अलग पहचाने जा सकते हैं।"[९] इनकी वेष-भूषा, प्रचार-पद्धति तथा रहन-सहन अपनी विशिष्टता लिए हुए है। ये गुरमति सिद्धांतों की व्याख्या भी अपने ही ढंग से करते हैं। इन्होंने गुरबाणी के प्रचार और प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन्होंने केवल गांवों में ग्रामीणों, अनपढ़ों को ही नहीं अपितु अपनी विद्वत्ता का लाभ उठाते हुए हिन्दी प्रदेशों के बड़े-बड़े नगरों में भी जा-जाकर संस्कृत तथा हिंदी के विद्वानों से शास्त्रार्थ करके गुरबाणी के महत्व को समझाया। इसके लिए उन्होंने पर्याप्त साहित्य की रचना भी की। निर्मले सन्तों द्वारा उपलब्ध रचित साहित्य का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

१. संस्कृत के ग्रंथ, २. पंजाबी की रचनाएं, ३. हिन्दी (ब्रज) गुरमुखी लिपि में उपलब्ध रचनाएं। इनमें मौलिक एवं अनूदित दोनों प्रकार की रचनाएं हैं। इन रचनाओं के आधार हैं—१. अनुवाद तथा टीकाएं, २. गुरबाणी व्याख्या, ३. सिख ऐतिहासिक ग्रंथ, ४. पौराणिक ग्रंथ, ५. अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथ।

ब्रज भाषा के ग्रंथ रचयिता प्रमुख निर्मला विद्वान इस प्रकार हैं—

साधू गुलाब सिंघ (प्रबोध चन्द्रोदय नाटक अध्यात्मरामायण, मोक्ष पंथ प्रकाश, भाव रसामत), पं. तारा सिंघ नरोत्तम—गुरमति निर्णय सागर, गुरू गिरार्थ कोश (दो भाग) गुरु तीर्थ संग्रह—श्री गुरू ग्रंथ साहिब सटीक; पं: आत्म देव सिंघ—स्वामी दयानन्द का मत और अद्वैत सिद्धि; पं: निहाल सिंघ—अकाल नाटक, निर्मल प्रभाकर, सिक्खी प्रभाकर; साधू गुरदित्त सिंघ—नैष्क्रम सिद्धि, टीका जपु जी साहिब; पं. निहाल सिंघ—कवीन्द्र प्रकाश, होली हुलास, सुधासर शतक; महंत तारा सिंघ अमृतसरी—टीका जपु जी साहिब; पं. साधू सिंघ—सत्यार्थ विवेक, श्री मुख वाक्य सिद्धांत, गुरु कीर्ति कवितावली, श्री गुरु सिखिया प्रभाकर, (पांच भाग) गुरु सिद्धांत रवि; पं निहाल सिंघ थोहा खालसा—गुरु सिद्धांत, रवि प्रकाश, चक्रधर चरित्र, चारु चन्द्रिका, जापु साहिब दशम ग्रंथ; साधू करम सिंघ—हरि अहष्ट सतसई; साधू गोविंद सिंघ—इतिहास गुरू खालसा; ज्ञानी ज्ञान सिंघ—पंथ प्रकाश; पं. अरजन सिंघ

मुनि—श्री गुरू पंथ प्रकाश टीका; भाई संतोख सिंघ—गुर प्रताप सूरज ग्रंथ; भाई सुक्खा सिंघ—गुर बिलास पातसाही दसवीं।

इनके अतिरिक्त और भी अनेक विद्वान हैं जिन्होंने निर्मल सम्प्रदाय में दीक्षित होकर गुरमति सिद्धांतों की व्याख्या करके गुरबाणी के प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनके साहित्य की विशष्टता यह है कि अत्यंत प्रौढ़ एवं परिमार्जित साहित्य के विद्वान होने के कारण ये विद्वान वर्ग को गुरबाणी का संदेश देने के लिए रचना करते थे। इन्होंने माध्यम बनाया ब्रज को, जो उस समय की प्रचलित भाषा थी, जिससे इस साहित्य की प्रतिष्ठा बढ़ी। इस साहित्य की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि यह जीवन के अधिक निकट है। मध्यकालीन समाज में प्रचलित मत-मतान्तरों में निर्गुण विचारधारा अधिक लोकप्रिय हुई क्योंकि इनका ज्ञान अनुभवाधारित था। दार्शनिक चिन्तन के क्षेत्र में पंजाब के निर्गुणी काव्यकारों ने सभी तत्वों के संबंध में सर्वाधिक महत्व स्वानुभूति को दिया है। तत्वों को निर्दिष्ट आदर्शों की कसौटी पर कसने की अपेक्षा अनुभव द्वारा प्रमाणित करना वे अधिक श्रेय समझते थे।[१०] जिसने अपने जीवन को निकट से देखा हो और वास्तविकता को जान लिया हो वही उसका दर्शन है। फिलासफी केवल प्रकृति का ज्ञान है बल्कि समाज का भी। यदि इस ज्ञान का आधार तत्व और प्रयोग हो यह विज्ञान कहा जाता है, परंतु यदि प्रयोग की जगह केवल अनुभव हों तो इसे फिलासफी ही कहूंगा।[११] यही उद्देश्य सिख गुरुओं का रहा। तत्कालीन परिस्थितियों में श्री गुरू नानक देव जी ने भी यही किया। "भारतीय दार्शनिक धार्मिक, रहस्यवादी और साहित्यिक परम्पराओं के धरातल पर श्री गुरू नानक देव जी की काव्य बाणी से निर्गुण काव्य का आरम्भ होता है। अपनी महान प्रतिभा, सहज सृष्टि और गम्भीर अनुभव के कारण श्री गुरू नानक देव जी इस काव्य-धारा के प्रवर्तक स्थापित होते हैं।"[१२] प्रस्तुत काव्य-धारा में उन्होंने अपने जीवन-दर्शन के मूलभूत सिद्धांतों से जुड़कर सुव्यवस्थित ढंग से सिख दर्शन तथा गुरमति दर्शन को प्रस्तुत किया। इन सिद्धांतों में एक गुरसिख के आदर्शों रहत मर्यादा तथा आचरण पर प्रकाश डाला गया है। "गुरू नानक देव जी भारतीय दर्शन की विचारवादी परम्परा से हुए हैं, जिसकी केन्द्रीय स्थापना यह है कि विश्व का परम यथार्थ एक शुद्ध आध्यात्मिक सत्ता है।"[१३] बाद में आने वाले गुरुओं ने भी इसी परिपाटी को अपनाया। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में छः गुरुओं के अलावा भक्तों तथा सूफी सन्तों की बाणी भी संकलित है। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने इस पावन ग्रंथ की उपयोगिता को समझते हुए इसे 'गुरू' की संज्ञा दी। इसमें सिख दर्शन की सभी मान्यताओं का विस्तृत विवेचन मिलता है। इसमें ईश्वर, गुरू, जीव, जगत, गुरमुख, मनमुख, मोक्ष आदि पर विस्तार से लिखा गया है। आत्मा-परमात्मा के स्वरस एवं सम्बंध पर गुरुओं, संतों, भक्तों के निजी अनुभव विद्यमान हैं। अन्तिम लक्ष्य मानव जीवन के लिए है उसकी आत्मा का परमात्मा में विलय। "दर्शन विद्या की उत्पत्ति का प्रयोजन है। दुख सामान्य (आशेष दुख) की निवृत्ति और सुख सामान्य (उत्तम सुख) की प्राप्ति।"[१४] सम्पूर्ण गुरबाणी में सिख दर्शन का विस्तृत विवेचन मिलता है। सभी सिख गुरुओं ने इस दर्शन को जन-जन तक पहुंचाने में सक्रिय योगदान दिया। उन्होंने अपने शिष्यों को इस काम में लगाया। भाई गुरदास जी जैसे अनेक विद्वान गुरु-सेवकों ने अपना सारा जीवन इसी

दर्शन को अर्पित कर दिया और अपनी बाणी से हिंदी, पंजाबी तथा संस्कृत भाषाओं में व्याख्या करके देश-प्रदेश में प्रचार और प्रसार किया। "उन्होंने श्री गुरू नानक देव जी के विचारों को गहराई से जानने का प्रयास किया और तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल व्याख्या प्रस्तुत की। आप ने अपनी रचनाओं में दैनिक जीवन के आचार-व्यवहार के उदाहरण लेकर जनता को सही मार्ग दिखाया।"[१५] इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए "गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपने पांच विद्वान शिष्यों- भाई गंडा सिंघ, भाई वीर सिंघ, भाई करम सिंघ, भाई सैण सिंघ तथा भाई राम सिंघ को काशी में संस्कृत पढ़ने भेजा। . . . सैंकड़ों सिखों ने बाणी के भावार्थ सीख कर गुरबाणी के विशेष भाष्य रचे।"[१६] बाद में ये निर्मल सन्तों के रस में प्रसिद्ध हुए। आजकल यह सिख धर्म के एक विशेष सम्प्रदाय के रूप में प्रसिद्ध हैं जिसे निर्मल सम्प्रदाय कहा जाता है। ये लोग बाणी का प्रचार-प्रसार करना ही अपने जीवन का लक्ष्य मानते हैं। "जहां ये लोग गुरबाणी के विद्वान होते हैं वहां इन्होंने शास्त्रों का अध्ययन भी किया होता है। संस्कृत और ब्रज भाषा के महान पंडित इसी सम्प्रदाय की उपज हैं।"[१७] ये लोग अपनी विद्वता का लाभ उठाकर वेदों और उपनिषदों से संकलित ज्ञान को तथा गुरबाणी की व्याख्या को तुलनात्मक दृष्टि से जनता के समक्ष प्रस्तुत करते हैं, जिसका कारण है वैदिक परम्परा में वेदान्त को जानने वाले भी गुरबाणी को जानने में समर्थ हो सकें। ये किसी भी मत का खण्डन नहीं करते, अपितु अपना तर्क प्रस्तुत करने के लिए दूसरे धर्म-ग्रंथों से प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। ". . . भारतीय दर्शन में ब्रह्म का निर्गुण पक्ष प्रस्तुत किया गया है, जिसका प्रकटीकरण सिख धर्म निर्मल संतों ने किया है। . . . निर्मल संतों ने इस दर्शन के कुछ अनिवार्य पक्षों की दृष्टि से सिख धर्म का अध्ययन किया, जो अपने आप में बड़ा अमूल्य परिश्रम था।"[१८] "निर्मल संतों का दार्शनिक दृष्टिकोण 'अद्वैतवादी' है। भ्रमपूर्ण बात यह है कि शंकराचार्य जो वेदान्ती थे, वे भी 'अद्वैतवाद' के प्रचारक थे। 'महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि शंकराचार्य का मत आधारित है उपनिषदों, वेदों, भगवद्गीता और ब्रह्म सूत्र पर और उसे 'अद्वैत-वेदान्त' कहा जाता है। परन्तु निर्मल सम्प्रदाय का मत आधारित है श्री गुरू ग्रंथ साहिब, सुखमनी और जपु जी साहिब आदि पर और उसके अद्वैत से वेदान्त शब्द जोड़ना उचित नहीं।"[१९] इन निर्मले सन्तों ने सिख गुरुओं की ही बाणी का अनुसरण किया है अलग दार्शनिक सिद्धांतों का नहीं। यह निर्गुण ब्रह्म की सत्ता में विश्वास करते हैं और गुरबाणी की व्याख्या के माध्यम औपनिषदिक भाषा को अपनाते हैं क्योंकि उस साहित्य के अध्ययन का प्रभाव इनकी शैली पर पड़ना स्वाभाविक ही है। इसी पर सिख सम्प्रदाय की निर्गुणवादी प्रवृत्तियों की छाप स्पष्टतया परिलक्षित होती है। इस पर किसी भी वाह्य इस्लाम, क्रिश्चियन आदि धर्मों का प्रभाव नहीं है। "पंजाब के निर्गुण साहित्य का एकेश्वरवाद जैसा कि पाश्चात्य चिन्तनानुयाइयों का विचार है, इस्लाम की देन नहीं, प्रत्युत शुद्ध उपनिषदिक्-चिन्तन का सार तत्व है। वेदों में प्रकृति के विभिन्न अंगों में सामान्यत: अलौकिक शक्तियों का दर्शन करके देवत्व स्थापित किया गया है।. . . किन्तु प्रस्तुत काव्य में जीवों और प्रभु के बीच देवताओं की सत्ता को अनावश्यक माना गया है।"[२०] गुरबाणी में उस ईश्वर को निर्गुण, निराकार, अजूनी—तीनों गुणों से परे कहा गया है।" सम्पूर्ण सृष्टि को उस ईश्वर का

ही विस्तार माना गया है। उसे अविनाशी और एक ओंकार कहा गया है- *"नाना बिधि कीनो बिसथारु ॥ प्रभु अबिनासी एकंकारु ॥"* निर्मले विद्वानों ने भी ईश्वर का स्वरूप गुरबाणी के अनुकूल ही माना है। उन्होंने अपने पूर्व रचित ग्रंथों की व्याख्या अथवा अनुवाद करके उन्हें हिन्दी तथा संस्कृत विद्वानों के अध्ययनार्थ प्रस्तुत किया जिसके फलस्वरूप गुरबाणी हिन्दी प्रदेशों में भी लोकप्रिय हुई। यह अत्यंत दुष्कर कार्य था जो निर्मले सन्तों के सद्प्रयत्नों से सम्पन्न हुआ। "कुछेक ने केवल हिंदी में लिखा, जैसे संत साधू सिंघ जी पीलीभीत, जिन्होंने सारे गुरू ग्रंथ साहिब के पर्याय हिंदी में रचे। आपने जपु जी साहिब का टीका भी हिन्दी भाषा में ही किया। ऐसे ही हिन्दी टीकाओं से प्रभावित होकर उत्तर प्रदेश के कुछ सिख विद्वानों ने भी जपु जी साहिब के बारे में लिखा। इनमें शंकर दयाल जी का अंग्रेजी अनुवाद, जो कि शायद अंग्रेजी में प्रथम अनुवाद है। ऐसे ही पं. साधू सिंघ जी के गुरू ग्रंथ प्रदीप से प्रभावित होकर बाबू छुट्टन बख्श, अहिलमद सब-जज गोंडा ने जपु जी साहिब का अनुवाद उर्दू भाषा में किया और साथ ही व्याख्या भी की।"[२१] ये विद्वान निर्मले अपने उद्देश्य हेतु गुरबाणी की व्याख्या करते और नवीन साहित्य की सृजना भी करते, लेकिन ये अपनी मातृ भाषा के मोह को न त्याग सके। इनकी व्याख्या का माध्यम तो ब्रज भाषा हिन्दी रही मगर लिपि गुरमुखी। निर्मले संतों का केवल धार्मिक, साहित्यिक अथवा साम्प्रदायिक महत्व ही पर्याप्त नहीं है, इनका सांस्कृतिक महत्व भी भारतीय संस्कृति के अनुरूप होने के कारण अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इनके साम्प्रदायिक मूल्य सम्पूर्ण भारत के सभी धर्मों से अपना सम्पर्क स्थापित किए हुए हैं। "सामाजिक विषयों के प्रति जीवन की रुचियां सांस्कृतिक मूल्यों का निर्माण करती हैं. . . विभिन्न जातियों, वर्गों, लिंग और तत्वों की सामाजिक स्थिति एवं महत्व, अनुराग और वैराग्य का सामाजिक चलन, कर्म-निष्ठा, कर्त्तव्य-पालन तथा धर्मानुसार विधि निषेधात्मक पारस्परिक व्यवहार भी मूलत: सांस्कृतिक मूल्य ही हैं।"[२२] सिख धर्म में ये सभी लक्षण उपलब्ध हैं। इनके द्वारा प्रेरित निर्मले संत भी श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के आदेश से सिख सिद्धांतों को आत्मसात कर सम्पूर्ण देश में छा गये थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति की महत्ता को पहचान लिया था। लगता है उन्होंने किसी रहस्य को जान लिया था। "गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपने विद्रोह आन्दोलन के सांस्कृतिक आधार को परिपुष्ट करने के लिए संस्कृत के महत्व को पहचाना। इस आधार के बिना कोई भी आन्दोलन देशव्यापी रूप धारण न कर सकता था। संस्कृत प्रेम को वे सामयिक आवश्यकता के रूप में नहीं बल्कि स्थायी आधार के रूप में ग्रहण करना चाहते थे।"[२३] आपने अच्छी प्रकार से जान लिया था कि भारतीय साहित्य और संस्कृति तथा प्राचीन परम्परागत विचारधारा को जाने बिना समाज की पुनर्स्थापना असम्भव है। आपने अपने शिष्यों को अनेकानेक ग्रंथों का पठन-पाठन कराया ताकि वे प्राचीन सांस्कृतिक विशेषताओं से अवगत हो सकें। निर्मले संतों को विशेष रूप से यही काम सौंपा गया। बाद में सदा उन्हें अपने पास रखा और यथासमय उनसे परम पवित्र ज्ञान का प्रकाश कराते रहते थे। इतना ही नहीं निर्मले संतों ने सामाजिक और राजनैतिक गतिविधियों में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। पहले तो ये घूम-घूम कर गांव-गांव, नगर-नगर जाकर गुरमति का प्रचार करते थे, बाद में

अन्य सम्प्रदाओं के समान इन्होंने भी अपने आश्रम (डेरे) स्थापित किए।

संदर्भ सूची:

१. पाण्डेय शशि भूषण 'शीतांशु', गुरू तेग बहादर की काव्य भाषा का प्रकार्यमूलक अध्ययन नवम गुरू पर बारह निबंध, सम्पा. रमेश कुंतल मेघ (अमृतसर : गुरू नानक देव वि. वि.), पृष्ठ ११२.

२. जयभगवान गोयल, हिन्दी साहित्य में गुरू तेग बहादर का स्थान, वही, पृष्ठ २८.

३. कबित्त भाई गुरदास जी, दूसरा स्कन्ध, सम्पा. भाई वीर सिंघ (अमृतसर : खालसा समाचार, १९८०), पृष्ठ ४४.

४. डॉ. तारन सिंघ, निर्मल सम्प्रदाय दी टीका पद्धति, निर्मल सम्प्रदाय, सम्पादक, स. प्रीतम सिंघ (अमृतसर): गुरू नानक देव यूनीवर्सिटी, १९८१), पृष्ठ २७५.

५. उपरोक्त, पृष्ठ २७६.

६-७. स. हरिभजन सिंघ, निर्मल कवियों की हिन्दी साहित्य को देन, पंजाब का हिन्दी साहित्य को योगदान, सम्पा. लाल सिंघ (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, १९७०), पृष्ठ १६७.

८. गुरदास बाणी, कथा हीर रांझनि की, सम्पा. सत्येन्द्र तनेजा (पटियाला, भाषा विभाग, पंजाब, १९६१), पृष्ठ २, भूमिका।

९. स. हरिभजन सिंघ, निर्मल कवियों की हिन्दी साहित्य को देन, पंजाब का हिन्दी साहित्य को योगदान, सम्पा. लाल सिंघ (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब), पृष्ठ १६७.

१०. मनमोहन सहगल, पंजाब का हिन्दी साहित्य (पटियाला : लीन पब्लि. अनुपलब्ध), पृष्ठ १८.

११. लाल सिंघ, गुरू अर्जुन जीवनी एवं रचना (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, १९७०), पृष्ठ ५२.

१२. प्रेम प्रकाश सिंघ, गुरू नानक ते निर्गुण विचारधारा (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब १९७३),पृष्ठ २२.

१३. जगबीर सिंघ, गुरू नानक बाणी विच नैतिकता दा संकल्प (पटियाला, भाषा विभाग, पंजाब १९७३), पृष्ठ ४२.

१४. वाचस्पति गैरोला, भारतीय दर्शन (इलाहाबाद : लोक भारती प्रकाशन, १९७२), पृष्ठ १५.

१५. निर्मल कुमार कौशिक, भाई गुरदास व्यक्तित्व और कृतित्व (दिल्ली : सूर्य प्रकाशन, १९८४), पृष्ठ ४५.

१६-१७. मान सिंघ निरंकारी, निर्मल सम्प्रदाय, सम्पा. प्रीतम सिंघ (अमृतसर, गुरू नानक देव यूनी: १९८१), पृष्ठ २३.

१८. गुरबचन सिंघ तालिब, भारतीय दर्शन परम्परा दे प्रसंग विच सिक्ख दर्शन दे कुझ पक्ख, सिक्ख फलसफे दी रूपरेखा, सम्पा. प्रीतम सिंघ, (अमृतसर, गुरू नानक देव यूनी:, १९७५), पृष्ठ २०३.

१९. केवल कृष्ण मित्तल, निर्मल सम्प्रदाय का दार्शनिक योगदान; सम्पा. प्रीतम सिंघ (अमृतसर, गुरू नानक देव यूनीवर्सिटी, १९८१), पृष्ठ २०४.

२०. मनमोहन सहगल, पंजाब का हिन्दी साहित्य (पटियाला : लीन पब्लि. अनुपलब्ध), पृष्ठ २६-२७.

२१. निरमलियां दे जपु जी सटीक, निर्मल सम्प्रदाय, सम्पा. प्रीतम सिंघ (अमृतसर: गुरू नानक देव विश्वविद्यालय), १९८१, पृष्ठ २९५.

संस्कृत और हिन्दी में जपु जी की प्रमुख टीकाएं

(क) जपु गूढार्थ दीपका : पं. निहाल सिंघ थोहा खालसा।

(ख) टीका गुरू भाव दीपका : पं. तारा सिंघ नरोत्तम।

(ग) पोथी टीका श्री जप जी का : पं. हर सिंघ नरोत्तम।

(घ) जपु प्रदीप : साधू देव सिंघ।

(च) जपु जी सटीक : साधू गुरदित्त सिंघ।

(छ) जपु जी सटीक : महंत गणेश सिंघ।

(ज) जपु जी दी टीका गरब गंजनी : भाई संतोख सिंघ।

(झ) जपु जी साहिब सटीक : संत निरंकार सिंघ निर्मले।

(ञ) जपु जी सटीक : बाल बोधनी टीका : पं. तारा सिंघ।

२२. मनमोहन सहगल, गुरू ग्रंथ साहिब : एक सांस्कृतिक सर्वेक्षण (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, १९७१), पृष्ठ १०२.

२३. स. हरिभजन सिंघ, निर्मल कवियों की हिन्दी साहित्य को देन, पंजाब का हिन्दी साहित्य को योगदान (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, सम्पा. लाल सिंघ १९७०), पृष्ठ १६९.

मानस की जात सबै एकै पहिचानबो

*-स. दमनजीत सिंघ**

औरंगजेब के सिंघासन पर बैठने के साथ ही मुगल राज्य एक नये युग में प्रवेश करता है। वह सुन्नी मुसलमान था। उसने उदारता तथा सहनशीलता की नीति को पूर्ण रूप से त्याग दिया। वह भारत को 'दार-उल-इस्लाम' अर्थात 'इस्लाम की धरती' बनाना चाहता था। औरंगजेब ने हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के लिये हर सम्भव प्रयत्न किये। उसने हिन्दुओं को कई प्रकार के प्रलोभन दिये। इस्लाम धारण करने वाले इन हिन्दुओं को हाथी पर बैठाकर जुलूस निकाला जाता था ताकि दूसरे हिन्दू भी इस सम्मान को प्राप्त करने के इच्छुक बनें।

औरंगजेब की धार्मिक असहनशीलता की नीति के कारण मुगल साम्राज्य को कई प्रकार की बगावतों का सामना करना पड़ा। हिन्दू जनता सामूहिक रूप से मुगल राज्य के विरुद्ध हो गई थी। परिणामस्वरूप मथुरा के जाटों, नारनौल के सतनामियों, राजस्थान के राजपूतों तथा पंजाब के सिखों ने मुगल सरकार के विरुद्ध शस्त्र उठा लिये तथा दूसरे सारे राज्य को चारों तरफ से मुसीबतों के भंवर में फंसा दिया।

श्री गुरू तेग बहादर साहिब जी की शहीदी ने सिखों में नयी चेतना प्रदान की। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने पराजित लोगों की सोई हुई शक्ति को सफलतापूर्वक जगा दिया तथा उनमें सामाजिक स्वतंत्रता व राष्ट्रीय प्रभुत्व स्थापित करने की इच्छा पैदा कर दी।

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने १६९९ ई. में खालसा पंथ की स्थापना की और अपने से पहले गुरू साहिबान द्वारा आरंभ किये कार्य को सम्पूर्ण किया तथा सिख धर्म को निश्चित और अंतिम रूप दिया। डॉ. हरीराम गुप्ता लिखते हैं—"खालसा की स्थापना देश के धार्मिक व राजीतिक इतिहास में एक युग बदलने वाली घटना थी।" डॉ. नारंग ने लिखा है—"गुरू गोबिंद सिंघ जी ने ऐसा भाईचारा स्थापित किया जिसमें ऊंच-नीच सब समान हैं। उन्होंने चारों जातियों को केवल एक करने का प्रयत्न ही नहीं किया बल्कि वे कई कदम और आगे बढ़े और एकदम उन्होंने धार्मिक असमानता को समाप्त करके एक धर्मतन्त्र लोकराज की स्थापना की।"

डॉ. मैकल्ड के अनुसार—"खालसा ऐसा संघ, भाईचारा, संगठन या समाज कहा जा सकता है जिसकी नींव धार्मिक व सैनिक अनुशासन की थी।" खालसा पंथ की स्थापना का उस समय यह परिणाम निकला कि गुरू साहिब को अपनी इच्छा के विरुद्ध पहाड़ी राजाओं तथा मुगलों के विरुद्ध युद्ध लड़ने पड़े। औरंगजेब ने श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी को दिल्ली आने के लिये पत्र भेजा परंतु गुरू साहिब ने इस पत्र का उत्तर वीर रस कविता में लिखे 'जफ़रनामे' द्वारा दिया। इसमें उन्होंने अपने साथ हुई ज्यादतियों का वर्णन किया।

औरंगजेब गुरू साहिब से भेंट करना चाहता था, परंतु वह जल्दी ही मर गया। औरंगजेब की मृत्यु (१७०७) के बाद उसके

**८८९, फेज़ १०, मोहाली-१६००६२*

पुत्रों—मुअज्जम तथा आजम में राजगद्दी के लिए युद्ध में श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने मुअज्जम की सहायता की तथा वह जीत प्राप्त करके बहादुरशाह के नाम से बादशाह बना।

१७०८ ई को श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी सचखंड गमन कर गये। वे अपने पीछे ऐसी विचारधारा तथा संगठित समाज छोड़ गये जिसने मुगल साम्राज्य की नींव को हिलाकर रख दिया।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने मुगल अत्याचारों का बड़ी हिम्मत तथा दृढ़ता के साथ मुकाबला किया। उनके सफल नेतृत्व में सिखों ने पंजाब से जुल्म भरे मुगल साम्राज्य को समाप्त करने में योगदान दिया। डॉ. गंडा सिंघ के अनुसार— "वह पहला व्यक्ति था जिसने पंजाब के असहनशील शासन को करारी मात दी।" १७१० ई में बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने सिख साम्राज्य की नींव रखी।

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का चरित्र महान तथा गौरवपूर्ण था। उन्होंने डूबते हुए भारत को बचा लिया। गुरू नानक देव जी ने सिख जगत जो बीज बोया था उसे श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने पक्की फसल के रूप में सम्पूर्ण किया, सिख समाज के सुंदर महल का निर्माण किया।

गुरू जी एक उच्चकोटि के कवि तथा महान योद्धा थे। वे कलम व कृपाण के धनी थे। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपने अवतार धारण का मनोरथ वर्णन करते हुए अपनी जीवन-कथा 'बचित्र नाटक' में लिखा है-

इह इह काज जगत मो आए ॥
धरम हेत गुरदेव पठाए ॥
जहां तहां तुम धरम बिथारो ॥
दुसट दोखीअनि पकरि पछारो ॥४२॥

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने संगत को खालसा का रूप प्रदान करके सिखों को संत-सिपाही बना दिया तथा *'गुरु संगत कीनी खालसा'* के आदर्श को साकार रूप दिया।

गुरू जी ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये अपना सारा जीवन जुल्म तथा दुष्टों को समाप्त करने के लिये लगा दिया। गुरदेव ने ऊंच-नीच, जात-पात के समस्त भेदभाव समाप्त कर दिये। उन्होंने प्रत्येक जीवात्मा में एक वाहिगुरू का रूप देखा। उन्होंने कहा:

मानस की जात सबै एकै पहिचानबो ॥
(अकाल उसतत)

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपनी शक्ति किसी निजी स्वार्थ के लिये नहीं प्रयोग की बल्कि उन्होंने दबे-कुचले हुए लोगों के अधिकारों के लिये हक, सच की लड़ाई लड़ी। उनकी शक्ति धर्म-युद्ध के लिये थी, किसी ज़र, जोरू या जमीन के लिये नहीं थी।

■

अमृत के दाते : श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी

(पृष्ठ २० का शेष)

इक बिन दूसर को न चिन्हार ॥
भंजन गढ़न समरत्थ सदा प्रभ, जानत है करतार ॥ *(देवगंधारी, पा: १०)*

गुरू साहिब उपदेश करते हैं कि मन-चित एकाग्र करके, सच्चे प्रेम, श्रद्धा और पूर्ण विश्वास से की गई प्रभु-भक्ति ही उसके दर-घर में प्रवान होती है:

साचु कहों सुन लेहु सभै
जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ ॥
(त्व प्रसादि सवय्ये, पा: १०)

■

तख्त श्री हरिमंदर जी, पटना साहिब

*-प्रो लालमोहर उपाध्याय**

पटना शहर बिहार की राजधानी होने के कारण ही नहीं बल्कि धार्मिक तथा ऐतिहासिक होने के कारण भी महत्वपूर्ण है। इसके अलावा यह शहर विद्या तथा साहित्य का भी केन्द्र रहा है। धार्मिक दृष्टिकोण से इसकी महत्ता श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का जन्म-स्थान होने के कारण भी है। यहां के मुख्य धर्म-स्थान का नाम तख्त श्री हरिमंदर जी, पटना साहिब है। यह सिख धर्म का दूसरा महान तख्त है। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के जन्म के समय इस शहर का नाम पटना शहर ही था, जैसा कि उनकी आत्म-कथा **'बचित्र नाटक'** में उल्लेख मिलता है:

तही प्रकास हमारा भयो ॥
पटना सहर बिखै भव लयो ॥

पटना शहर ने तीन गुरू साहिबान के चरणों की धूल प्राप्त की है। सबसे पहले इसको श्री गुरू नानक देव जी ने अपनी पूर्व दिशा की पहली यात्रा के समय पवित्र किया। इस शहर में १५०६ ई में गुरू जी **'पश्चिम दरवाजा'** से अंदर आए और भक्त जैता मल (आज के गुरुद्वारा गाय घाट साहिब) के पास ठहरे। वहीं से अपने शिष्य भाई मरदाना जी को, जो भूखे थे, एक कीमती हीरा देकर बेचने के लिए भेजा। भाई मरदाना जी कपड़ा बाजार तथा सब्जी बाजार होते हुए एक जौहरी की दुकान में पहुंचे जिसका नाम सालिस राय था। उसके नौकर अधरका ने हीरा देखते हुए मालिक सालिस राय से मुलाकात कराई। हीरा कीमती होने के कारण सालिस राय ने उसकी दर्शन-भेंट १०० रुपए देकर भाई मरदाना जी को हीरा वापिस कर दिया। श्री गुरू नानक देव जी के नाराज होने पर भाई मरदाना जी पुन: सालिस राय के पास वापिस आये। इस उदारता को देखते हुए सालिस राय तथा अधरका ने भाई मरदाना जी से श्री गुरू नानक देव जी के दर्शन करने की इच्छा जाहिर की और दर्शनोपरांत श्री गुरू नानक देव जी के अनन्य भक्त हो गए। गुरू जी को अपने निवास-स्थान पर पधारने के लिए निमंत्रित किया और सालिस राय के निमंत्रण को स्वीकार करते हुए गुरू जी ऐतिहासिक कथनानुसार लगभग चार महीने यहां पर ठहरे और सुबह-शाम संगत को उपदेश देते थे। जाते समय इस स्थान को जो सालिस राय ने धर्म के नाम पर दान दिया था, पुण्य स्थान (संगत) बनाकर सालिस राय को निगरान बनाया।

श्री गुरू तेग बहादर जी, श्री गुरू नानक देव जी के बाद पहले गुरू थे जिन्होंने पंजाब के बाहर धर्म-प्रचार हेतु यात्रा की। पूर्व की यात्रा के समय गुरू नानक-मिशन का प्रचार करते हुए मई १६६६ ई के आरंभ में वे पटना साहिब आए। उनके साथ गुरू जी के माता, माता नानकी जी, धर्म-पत्नी माता गुजरी जी तथा उनके भ्राता भाई कृपाल चंद जी एवं अन्य दरबारी सिख थे। गुरू जी के कुछ समय बडरी संगत, गायघाट ठहरने के उपरांत उनके परिवार को सालिस राय जौहरी की संगत में एक जुलूस के रूप में लाया गया। उस समय इस संगत का

**हिन्दी विभाग, श्री गुरू गोबिंद सिंघ कॉलेज, पटना सिटी-८०००८ (बिहार)*

संचालक अधरका का पड़पोता घनश्याम था।

गुरू जी कुछ दिन ठहरने के बाद परिवार को यहां छोड़कर बंगाल तथा आसाम चले गए। मुंगेर जाकर पटना की संगत के नाम से एक हुक्मनामा जारी किया और परिवार को एक अच्छी हवेली में रखने का आदेश देते हुए संगत को आशीर्वाद दिया। इसी हुक्मनामे में पटना साहिब को (गुरू का घर) कहा है।

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का प्रकाश इसी पटना साहिब में २३ पौष संवत् १७२३ तदनुसार २२ दिसंबर, १६६६ ई को हुआ था।

श्री गुरू तेग बहादर जी अपनी प्रचार-यात्रा के दौरान उस समय ढाका में थे, जब पटना से बालक गोबिंद राय के जन्म का संदेश उनको मिला। गुरू जी ने अकाल पुरख परमात्मा का धन्यवाद किया तथा निर्धनों एवं जरूरतमंदों को दान दिया।

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपने बचपन के लगभग ७ साल पटना में व्यतीत किये। अपने नन्हें-नन्हें चरण-कमलों की अमिट छाप इस भूमि पर छोड़ गए। पटना में पं शिवदत्त शर्मा, नवाब रहीम बख्श, करीम बख्श, पीर अरीफोदीन, सैयद भीखन शाह, राजा फतह चंद मैनी गुरू जी के खास श्रद्धालुओं में थे।

इस पवित्र जन्म-स्थान की इमारत की सेवा-संभाल (मरम्मत) पहली बार स्थानीय राजा फतेहचंद मैनी ने संवत् १७२३ में कराई थी, जब गुरू जी का परिवार इस स्थान पर आया था।

मुल्ला अहमद बाबाहनी १८वीं सदी के अंत में पटना आए थे जिन्होंने मिसल उल आहिवाल जहानुमा में तख्त श्री हरिमंदर जी, पटना साहिब के बारे में नीचे लिखे शब्द अंकित किए हैं:-

"गुरू गोबिंद सिंघ जी के जन्म-स्थान पर उनके श्रद्धालुओं ने एक शानदार यादगारी इमारत बनायी है, जिसका नाम 'हरिमंदर' रखा है। यह सिखों की शक्ति का केन्द्र बन गया है। इसको 'संगत' भी कहा जाता है। सिख कौम के लिए यह सत्कार तथा नम्रता एवं श्रद्धा का प्रतीक है।"

१९३४ ई के भूकंप के कारण इस इमारत में कुछ दरारें आ गई थीं, जिसकी सिख-संगत ने मरम्मत कराके नई इमारत बनाने के लिए सोचा, जिसका परिणाम यह हुआ कि चारों तरफ से इसके लिए दान आने लगा। जन्म-स्थान के नजदीक वाली आवासीय इमारत को फूलकी स्टेट के राजाओं ने पहले ही बना दिया था जिसका सबूत लगे हुए पत्थरों से मिलता है। इस नई इमारत को बनाने में चीफ खालसा दीवान अमृतसर, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी अमृतसर, अनेक संतों-महापुरुषों तथा संगत का खास तौर से सहयोग मिला। १० नवंबर, १९५४ ई को कार्तिक पूर्णिमा, श्री गुरू नानक देव जी के प्रकाशोत्सव पर इस पांच-मंजिली इमारत की नींव रखी गई थी। इस काम को शुरू करने की देर थी कि सिख-जगत द्वारा तन-मन-धन से सेवा होने लगी। तीन साल बाद सन् १९५७ ई में २३ पौष को श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के प्रकाश दिवस पर इस इमारत का सेवा-कार्य सम्पूर्ण हुआ।

इस पांच-मंजिली इमारत के नीचे तहखाना है। ग्राउंड फ्लोर जन्म-स्थान में श्री गुरू ग्रंथ साहिब, दशम ग्रंथ—गुरू गोबिंद सिंघ जी तथा श्री गुरू तेग बहादर जी की खड़ाउं है। पहली मंजिल पर अमृत-पान तथा विवाह (आनन्द कारज) करने की व्यवस्था है। चौथी मंजिल पर श्री गुरू ग्रंथ साहिब की पुरातन हस्तलिपि और पत्थर के छाप की पुरानी बीड़ को सुरक्षित रखा गया है।

तख्त श्री हरिमंदर जी, पटना साहिब के ऐतिहासिक दर्शनीय स्मृति-चिन्ह

१. श्री गुरू ग्रंथ साहिब (बड़ा सरूप), जिन पर श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी महाराज ने तीर की नोंक से केशर के साथ मूल-मंत्र लिखा था। इनके दर्शन संगत को गुरुपर्व एवं संक्रान्ति के दिन करवाये जाते हैं।

२. छवि साहिब : श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी महाराज की युवावस्था का तैल-चित्र।

३. पंघूड़ा साहिब (चार पांव का छोटा झूला), जो अभी भी सोने की प्लेटों से मढ़ा हुआ है और जिस पर गुरू जी बचपन में बैठा करते थे।

४. छोटी सैफ : गुरू जी की छोटी कृपाण, जिसे वे बचपन में धारण किया करते थे।

५. गुरू जी के गुलेल की गोली जिससे वे पानी वाले घड़े फोड़ा करते थे।

६. गुरू जी के बचपन के चार तीर जिससे गुरू जी पानी वाले घड़े तोड़ दिया करते थे।

७. गुरू महाराज की लोहे की छोटी चकरी जिसे वे अपने केशों में धारण किया करते थे।

८. लोहे का खंडा, जो गुरू जी दस्तार में सजाया करते थे।

९. गुरू जी का छोटा बघनघा खंजर जो कमरकस्सा में धारण किया करते थे।

१०. गुरू जी का (चंदन की लकड़ी का) कंघा जिससे वे केश संवारा करते थे।

११. गुरू जी के लोहे के दो चक्र जो वे दस्तार में सजाया करते थे।

१२. गुरू जी के लिए हाथी दांत की बनाई खड़ाउं।

१३. श्री गुरू तेग बहादर जी की चंदन की लकड़ी की खड़ाउं का एक जोड़ा।

१४. भक्त कबीर जी की खड्डी, जिससे वे कपड़ा बुनते थे।

१५. श्री गुरू तेग बहादर जी, श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी तथा माता सुंदरी जी के हुक्मनामों की एक पुस्तक।

१६. गुरू जी का ३०० साल पुराना चोला (चोगा)।

१७. माता गुजरी जी का कुआं।

१८. एक इंच साइज में श्री गुरू ग्रंथ साहिब की छोटी बीड़। ■

कविता

दर्शन सतिगुर का

*-तुली फकीर चन्द जालंधरी**

लक्ख खुशियां बरसाए, दर्शन सतिगुर का।
जो मांगे सो ठाकुर देवे, जो नानक सतिगुर को सेवे,
दामन भरता जाए, दर्शन सतिगुर का।
भारत की सूखी फसलों को, गुरू नानक लहराया,
इस दर्शन से नागों ने भी, करी सीस पे छाया,
सोये भाग जगाए, दर्शन सतिगुर का।
दामन भरता जाए, दर्शन सतिगुर का।
भारत था सोया और उसकी सोई थी तकदीरें,
भारत माता के पाँवों में, पड़ी थीं जब ज़ंजीरें,
ज़ंजीरों को तोड़ दिखाया, जब बाबर को सच सुनाया,
सच की बाणी गाए, दर्शन सतिगुर का।
दामन भरता जाए, दर्शन सतगुर का।
आओ इस दरबार से, आत्म-मन की भक्ति ले लो,
नानक की बाणी से अपने, मन की शक्ति ले लो,
गुर के दर्शन अपर-अपारा, कल्प-वृक्ष है गुरुद्वारा,
किस्मत को पलटाए, दर्शन सतिगुर का।
दामन भरता जाए, दर्शन सतिगुर का। ■

**५, रमेश कॉलोनी, एस. डी. वोमेन कॉलेज मार्ग, जालंधर। मोः ९८१५८-८८०५८*

श्री गुरू हरिराय साहिब जी

*-स. गुरदीप सिंघ**

गंजनामा में भाई नंदलाल जी ने श्री गुरू हरिराय साहिब जी के बारे में लिखा है कि श्री गुरू हरिराय साहिब सत्य के अनुयायी भी थे तथा सत्य के पालक भी; श्री गुरू हरिराय साहिब सुल्तान भी हैं और दरवेश भी; श्री गुरू हरिराय साहिब दोनों जहां की बख्शिश करने वाले हैं तथा लोक-परलोक के सरदार हैं-

हक परवर हक केश गुरू करता हरि राइ
सुलतान हम दरवेश गुरू करता हरि राइ ॥८७॥
फ़याजुल दारैन गुरू करता हरि राइ
सरवरि कौनन गुरू करता हरि राइ ॥८८॥

श्री गुरू हरिराय साहिब का जन्म छठे पातशाह श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी के बड़े सपुत्र बाबा गुरदित्ता जी के गृह में माता निहाल कौर जी की कोख से १९ माघ सं. १६८६ दिन शनिवार तदनुसार १६ जनवरी, १६३०, शीशमहल, कीरतपुर साहिब (जिला रोपड़) के पावन स्थान पर हुआ। आप जी की कोमलता एवं शान्ति की साखियां विश्व-प्रसिद्ध हैं।

कोमल-हृदय श्री गुरू हरिराय साहिब जी के बचपन की एक साखी जगत-प्रसिद्ध है। एक दिन आप करतारपुर में बगीचे में घूम रहे थे। आपने बहुत खुला चोगा पहना हुआ था। हवा के एक झोंके के साथ आपका चोगा उड़कर पौधों में उलझ गया जिससे कुछ फूल डाली से टूटकर नीचे जमीन पर गिर पड़े। यह देखकर आपका कोमल हृदय बहुत दुखी हुआ। तभी गुरू हरिगोबिंद साहिब जी पास आए और उन्होंने गुरू हरिराय साहिब जी को उदास खड़ा देखकर कारण पूछा तो श्री गुरू हरिराय साहिब जी ने बताया कि उनके चोगे के साथ उलझ कर ये बेचारे निर्दोष फूल टूटकर गिर गए हैं, इस बात का मुझे बहुत दुख है। यह सुनकर श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी ने कहा कि यदि चोगा बड़ा पहना हो तो संभल कर चलना चाहिए। यह इस बात का संकेत था कि यदि बड़ी जिम्मेदारी उठा लें तो ताकत का प्रयोग सूझ-बूझ से करना जरूरी है।

श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी ने गुरगद्दी की जिम्मेदारी को संभालने के लिए अपने पुत्रों, सिखों व पोतों में से गुरू हरिराय साहिब जी को योग्य समझा। आप जी की आयु उस समय चौदह वर्ष की थी। ११ चेत्र, सं. १७०१ (८ मार्च, १६४४ ई) को आप गुरुता-गद्दी पर विराजमान हुए। बाबा बुड्ढा जी के पुत्र भाई भाना जी ने आपको गुरुता का तिलक लगाया।

हर समय २२०० जवान श्री गुरू हरिराय साहिब जी के साथ रहा करते थे जो केवल अपनी अथवा गुरू-घर की सुरक्षा की खातिर रखे थे किसी दूसरे पर धावा बोलने के लिए नहीं। आपने कोई जंग नहीं लड़ी। गुरू जी स्वयं अमन के पुजारी थे और गुरसिखी का प्रचार करके जगत का उद्धार करना चाहते थे।

गुरू का लंगर : श्री गुरू नानक देव जी के समय से ही 'लंगर' की प्रथा चली आ रही थी। लंगर वितरित करने का समय बीत जाने पर

**३०२, किदवाई नगर, लुधियाना। मो: ९८८८१२६६९०*

लांगरी लंगर बंद कर दिया करते थे। श्री गुरू हरिराय साहिब जी ने हुक्म दिया, "अतिथि या श्रद्धालु का कोई समय नहीं। जब भी कोई लंगर छकने का चाहवान आए उसे 'परशादा' तैयार करके छकाया जाए।"

दवाखाना : श्री गुरू हरिराय साहिब जी ने बहुत बड़ा दवाखाना खोला जिसमें प्राचीन तथा बहुमूल्य जड़ी-बूटियां उपलब्ध थीं। आप एक वैद्य के रूप में दीन-दुखियों और रोगियों को नि:शुल्क दवा देते और प्रभु-सुमिरन के साथ जोड़ते।

मुगल बादशाह शाहजहां के चार पुत्र थे— दारा शिकोह, शुजाह, औरंगजेब और मुराद। शाहजहां दारा शिकोह से बहुत प्यार करता था और उसे ही अपना वारिस बनाना चाहता था परन्तु औरंगजेब खुद गद्दी हासिल करना चाहता था। इसी कारण वह दारा शिकोह से द्वेष रखता था। इसी ईर्ष्या के कारण एक दिन रसोईए के द्वारा उसके खाने में शेर की मूंछ का बाल मिला दिया। दारा शिकोह बीमार रहने लगा तथा किसी भी दवा और दुआ से उसे आराम न मिला। कई वैद्यों ने मिलकर मश्वरा करके उपाय बताया कि एक लौंग, जिसका वजन एक माशा हो और एक हरड़ जिसका वजन १४ माशा हो, यदि इन दोनों को मिलाकर दारा शिकोह को खिला दिया जाए तो शेर का बाल बाहर निकल आयेगा और वह स्वस्थ हो जायेगा। शाहजहां ने पूरे देश में लौंग और हरड़ लाने के लिए आपने चाकरों को भेजा पर ये चीजें कहीं से न मिलीं। वजीर खां ने बताया कि उसे श्री गुरू हरिराय साहिब जी के एक सिख से पता चला है कि ये दोनों वस्तुएं गुरू जी के पास हैं और आप गुरू जी से मांग लें। शाहजहां ने गुरू जी को पत्र लिखा कि उसे एक माशा वजन का लौंग और १४ माशी हरड़ की जरूरत है जो आपके पास है, यदि आप यह भेज दें तो दारा शिकोह स्वस्थ हो सकता है। इसके साथ ही एक गज मोती (जो हाथी के सिर से निकलता है) भी अपने पास से भेज देना, मैं उसे देखना चाहता हूं।

जब बादशाह का उमराव, पत्र लेकर कीरतपुर साहिब आया तो गुरू जी ने तीनों वस्तुएं अपने तोशेखाने से निकलवा कर दे दीं। शाहजहां इन दुर्लभ वस्तुओं को देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। दारा शिकोह का इलाज शुरू किया गया और वह राजी हो गया।

जब शाहजहां के पुत्रों में दिल्ली के तख्त के बारे में जंग हुई तो दारा शिकोह औरंगजेब से हारकर लाहौर की ओर भागा तो उसका पीछा करने के लिए औरंगजेब ने उसके पीछे फौज लगा दी। तब दारा शिकोह श्री गुरू हरिराय साहिब जी की शरण में गोइंदवाल गया और विनती की कि आप मेरे पीछे लगाई फौज को एक दिन के लिए रोक लें। शरण में आए जरूरतमंद की बांह थामनी गुरू-घर का पहला नियम रहा है। गुरू हरिराय साहिब जी अपने २२०० जवान लेकर व्यास दरिया के किनारे खड़े हो गए और सभी बेड़ियों को अपने कब्जे में कर लिया। औरंगजेब की फौज को एक दिन दरिया पार करने से रोक लिया गया। इस प्रकार दारा शिकोह को (औरंगजेब की फौज रोकने का) दिया वचन भी पूरा किया, अमन भी भंग न होने दिया और न ही खून-खराबा किया।

शाहजहां को कैद करके और भाइयों को मार कर खुद औरंगजेब ने दिल्ली का तख्त हासिल कर लिया। औरंगजेब कट्टर शिया मुसलमान था। उसने सोचा कि यदि सिखों के गुरू को

मुसलमान बना लूं तो लाखों हिन्दू-सिख इस्लाम को कबूल कर लेंगे, इसलिए तख्त पर बैठने के बाद जल्दी ही गुरू जी को दिल्ली बुला भेजा। प्रमुख सिखों के साथ परामर्श करके श्री गुरू हरिराय साहिब जी ने अपने बड़े पुत्र रामराय को दिल्ली भेज दिया और अच्छी तरह ताकीद की कि वहां जो कुछ पूछा जाए निर्भय होकर सच कहना, परमात्मा पर भरोसा रखना, गुरबाणी और श्री गुरू नानक देव जी के आशय के विपरीत कोई बात न करना। जब रामराय दिल्ली पहुंचे तो औरंगजेब ने पूछा कि आपके पिता ने दारा शिकोह की मदद क्यों की? रामराय के उत्तर दिया कि श्री गुरू नानक देव जी के घर में आरंभ से ही यह रीति रही है कि जो भी शरण में आए उसकी हर संभव सहायता की जाए। गुरू नानक साहिब का दर सबके लिए खुला है। दारा शिकोह की मदद गुरू जी ने इंसान जान कर की न कि आपसे किसी प्रकार के द्वेष के कारण। उनके लिए *'ना को बैरी नही बिगाना'*। यह उत्तर गुरमति उसूलों के विरुद्ध न था। परंतु जो गुरमति उसूलों के अनुसार अनुचित था वो था रामराय द्वारा करामातें दिखाना। फिर एक दिन औरंगजेब ने कहा कि "तुम्हारे ग्रंथ साहिब में यह क्यों लिखा है?

मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुम्हिआर ॥
घड़ि भांडे इटा कीआ जलदी करे पुकार ॥"

(पन्ना ४६६)

"इसका क्या अर्थ है? क्या यह हमारे दीन की निंदा नहीं?" रामराय भय व लालच में आ गया और बादशाह को खुश करने के लिए श्री गुरू नानक देव जी के आशय से चूक गया और कहा 'मिटी मुसलमान की' नहीं बल्कि 'मिटी बेईमान की' लिखा है। बादशाह ने प्रसन्न होकर रामराय को दून का इलाका जागीर के रूप में दे दिया। जब श्री गुरू हरिराय साहिब जी को पता चला तो उन्हें इस बात का बहुत दुख हुआ कि रामराय ने श्री गुरू नानक देव जी की बाणी को उल्ट दिया है। आपने फैसला कर रामराय से हर प्रकार के संबंध-विच्छेद कर लिए तथा आज्ञा दी कि 'रामराय साडे मत्थे न लग्गे।' रामराय के ऐसे व्यवहार तथा गुरू-घर की विरोधता के कारण आज भी गुरू के सिखों को रामराइयों के साथ रोटी-बेटी की सांझ न रखने के आदेश हैं।

श्री गुरू हरिराय साहिब ने अपना ज्यादा समय गुरसिखी के प्रचार में व्यतीत किया। आप सिखी के आदर्शों, सिद्धांतों की व्याख्या करके सिखों की शंकाओं को दूर करते। आपकी गुरुआई के समय सिखी बहुत दूर तक फैली। *पहाड़ी राजाओं को उपदेश :* दो पहाड़ी राजे बहुत सी सेना लेकर कीरतपुर आए। उनका विचार था कि गुरू जी से कर वसूली करेंगे। कीरतपुर में गुरू जी के पास आकर बैठ गए तो गुरू जी उनके मन की बात जान गए और उनसे कहा कि "फकीरों से कर नहीं मांगा जाता। अगर चाहो तो नाम-धन दे सकते हैं जो कि परलोक में भी आपके साथ जायेगा।" यह सुनकर राजे गुरू जी के पांव पड़ गए। गुरू जी ने उनको उपदेश दिया कि अहंकार का त्याग करो, नम्रता से राज-काज चलाओ, प्रजा को दुखी न करो। प्रजा को दुखी करोगे तो परमात्मा के कोप और नर्क के भागी बनोगे। पर-नारी और पर-धन का त्याग करो, शराब न पीओ, प्रजा की फरियाद सुनकर उनके दुख दूर करो। जो राजा प्रजा को दुखी करता है वह स्वयं अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारता है। इस

(शेष पृष्ठ ४५ पर)

श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर

-*स. बिक्रमजीत सिंघ**

श्री हरिमंदर साहिब दुनिया में एक ऐसा स्थान है जो सारी इंसानियत के लिए भाईचारे और सांझीवालता का प्रतीक है। इसके चार दरवाजे दुनिया की चारों दिशाओं से आने वाले लोगों के लिए बिना किसी भेदभाव के आठों पहर, चौबीस घंटे खुले रहते हैं।

इस हरि के घर की नींव पांचवें गुरू श्री गुरू अरजन देव जी ने मुस्लिम सूफी संत साईं मीयां मीर जी से १ माघ संवत् १६४५ को रखवाई। श्री गुरू अरजन देव जी की दूर-अंदेशी सोच के कारण उन्होंने एक मुस्लिम सूफी संत से यह नींव रखवा कर धार्मिक संसार में सांझीवालता के प्रत्यक्ष दर्शन की मिसाल दी। गुरू जी के इस महान कार्य के कारण सिखों को उनका अपना केन्द्रीय धार्मिक स्थान मिल गया, जिससे सिखों की एक अलग पहचान कायम हुई।

जिस पवित्र स्थान पर श्री हरिमंदर साहिब सुशोभित है असल में इस स्थान पर जगत-तारक सतिगुरू श्री गुरू नानक देव जी नवंबर १५०१ को सुलतानपुर लोधी से चलकर श्री गोइंदवाल, फतेहाबाद से होते हुए सुलतानविंड गांव की संगत के साथ एक ढाब के किनारे बेरी के वृक्ष के नीचे बैठ कर अलाही बाणी का गायन करते हुए बोले:

बाबा अलहु अगम् अपारु ॥
पाकी नाई पाक थाई सचा परवदिगारु ॥
(पन्ना ५३)

अमृतसर गैजटियर के अनुसार श्री गुरू रामदास जी ने इस स्थान और इसके साथ वाले इलाके की ५०० बीघे जमीन समकालीन बादशाह अकबर से जागीर में ली और उसके बदले में तुंग गांव के जागीरदारों को ७०० अकबरी रुपये दिए। श्री गुरू रामदास जी ने सन् १५७७ को इस ताल वाले स्थान पर सरोवर खुदवाया और १५८१ तक मुकम्मल करवा कर एक दर्शनी डिउड़ी बनवाई। इसके उपरांत उन्होंने अमृतसर शहर की नींव रखी जिसे 'गुरू का चक्क' या 'रामदासपुरा' कहते थे।

इसी सरोवर के बीच में पांचवें गुरू श्री गुरू अरजन देव जी ने श्री हरिमंदर साहिब की नींव रखवाई और उसे सन् १६०१ तक संपूर्ण करवा लिया। सन् १६०४ में श्री गुरू अरजन देव जी ने श्री हरिमंदर साहिब में आदि श्री गुरू ग्रंथ साहिब की स्थापना करवा कर बाबा बुड्ढा जी को पहला ग्रंथी नियुक्त किया। इन सभी कार्यों में बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी, भाई सालो जी, भाई बहिलो जी और अनेकों गुरू के सिखों ने तन, मन के साथ सेवा निभाई, लंगर-प्रथा को जारी रखने हेतु विशेष यत्न किए। इस तरह श्री हरिमंदर साहिब (अमृतसर) गुरू नानक साहिब के चलाए निर्मल पंथ का एक विशाल और महान केन्द्र बन गया, जिसकी उपमा है:

डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ ॥(पन्ना १३६२)

**२९४६/७ बाजार लौहारां, चौंक लछमणसर, श्री अमृतसर।*

श्री हरिमंदर साहिब के समीप श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब ने श्री अकाल तख्त साहिब की सृजणा कर धार्मिकता के साथ स्वच्छ राज्य प्रबंध के लिए भी प्रेरित किया जिसका अपना एक अलग इतिहास है।

सातवें गुरू श्री गुरू हरिराय साहिब और नौवें गुरू श्री गुरू तेग बहादर साहिब भी इस स्थान पर आए जिससे इस स्थान की महिमा और बढ़ जाती है।

गुरू-काल के बाद श्री हरिमंदर साहिब अनेकों ही असहनीय कष्टों में से गुजरा। समय की मुगल हकूमत ने इस पर अनेकों बार आक्रमण कर इसे ढाहने की कोशिशें की, लेकिन यह हरि का घर खुद निरंकार द्वारा बसाया गया होने के कारण युगो-युग अटल है। गुर-वाक्य है:
हरि मंदरु हरि साजिआ हरि वसै जिसु नालि ॥
(पन्ना १४१८)

कितने ही जालिमों ने इसकी पवित्रता को भंग करने की कोशिश की। वे जालिम चाहे अब्दाली जैसा हो, चाहे मस्सा रंगड़ जैसा; फौज लेकर आने वाला चाहे जहान खान था और चाहे तैमूर शाह जैसा तानाशाह, जिसने भी श्री हरिमंदर साहिब की तरफ आंख उठा कर देखा उसे मुंह की खानी पड़ी।

श्री हरिमंदर साहिब खुद हरि का अपना घर है, अत: श्री हरिमंदर साहिब युगों-यगों तक कायम रहेगा।

वर्तमान में सरोवर के बीचोबीच कमल के फूल की भांति श्री हरिमंदर साहिब हमें यह उपदेश देता है कि हमें इस संसार में ऐसे रहना है जैसे कमल का फूल, जो सुंदरता, सहजता, उज्जवलता, कोमलता, पवित्रता, निरलेपता और अमनपसंदी का प्रतीक माना जाता है। वह पानी में रह कर भी उसमें भीगता नहीं। वह हर समय अपनी महक बरकरार रखता है। श्री हरिमंदर साहिब में नाम का प्रवाह हर समय चलता रहता है। इसमें बाणी के बोहिथ श्री गुरू ग्रंथ साहिब हर प्राणी को संसार-सागर में से पार होने की जिज्ञासा प्रज्वलित करते हैं। अभिलाषी कीर्तन की विस्मादी ध्वनि से आनंद मानता है और जिन्दगी के असली मनोरथ को अपने अंदर इस प्रकार महसूस करता है कि जिन्दगी का सही मनोरथ मानव समाज की निष्काम सेवा में है, सरबत्त का भला चाहना तथा करना है अथवा अपनी नेक कमाई में से दूसरों की मदद करना है और सबसे बड़ी बात नाम जपना अर्थात प्रभु-भक्ति में लीन होना है, अपने आप को पांच विकारों से दूर कर वाहिगुरू की प्राप्ति के ऊंचे मनोरथ की तरफ जुड़ना है। श्री हरिमंदर साहिब का पवित्र पर्यावरण और मर्यादा उसके इन सभी कार्यों में बहुत सहायी होती है।

सहायक पुस्तकें:
-दी गोल्डन टेंपल, प्रकाशक एस. जी. पी. सी, अमृतसर।
-दस पातशाहिआं, सोढी तेजा सिंघ।
-सिख इतिहास, डॉ. गंडा सिंघ।
-हरिमंदर दर्शन, डॉ. सरूप सिंघ अलग।
-श्री अमृतसर जी दे दर्शन स्नान, प्रकाशक एस. जी. पी. सी, अमृतसर।
-इतिहास श्री हरिमंदर साहिब, वही।

भारतीय चिंतन परंपरा और खालसा पंथ

*-डॉ. अविनाश शर्मा**

मानव के आध्यात्मिक तथा मानसिक विकास के जितने प्रयास भारतीय उपमहाद्वीप में हुए हैं उतने विश्व के किसी अन्य देश में नहीं हुए। भारत की भूमि उपजाऊ थी और जलवायु भी मानवीय क्रियाओं और व्यवहारों के अनुकूल थी, इसलिए मानव को जीवन जीने के लिए कठिन परिश्रम तथा संघर्ष नहीं करना पड़ा। भारतीय चिन्तकों ने जीवन के एक मोड़ पर आकर मानव-निर्मित संसार को छोड़ कर जंगलों में रहने का परामर्श दिया है। इन्हीं जंगलों में बैठकर प्रकृति-प्रदत्त कंद-मूल खाकर इन मनीषियों ने जीवन के प्रत्येक पक्ष का गहरा अध्ययन किया है, जीवन के जटिल प्रश्नों पर खूब विचार-विमर्श किया है। जीवन को सुंदर से सुंदरतम बनाने और व्यक्ति के आत्मिक विकास के लिए अनेक दार्शनिक सिद्धांतों और आदर्शों को जन्म दिया है। ये आदर्श, विश्वास एवं आस्थाएं प्रकृति के सुंदर एवं मनोरम रूपों को सामने रख कर विकसित किए गए हैं। बाद में प्रकृति के इन्हीं रूपों ने धर्मों से संबंध जोड़ लिया और ये रूप पूजनीय हो गए। इसके विपरीत पश्चिमी देशों के धर्म मध्य-पूर्व के मरुस्थलों में जन्मे हैं, इसलिए इन धर्मों के ग्रंथों में हरियाली, ऊंचे पर्वतों, जल से भरी नदियों और झरनों की कल्पना की है। इन धर्मों के अनुयाइयों ने अपने ईष्ट से उन सभी सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए प्रार्थना की है जिनका वर्णन उनके धार्मिक ग्रंथों में उपलब्ध है। इन धर्मों में ईश्वर-प्राप्ति का ज्ञान केवल धर्म गुरुओं के पास है। ईश्वर ने इन धर्म-गुरुओं को कुछ आदेश एवं आज्ञाएं दी हुई हैं जिनका प्रचार-प्रसार मौखिक एवं लिखित रूप में ये धर्म-गुरू करते हैं। जो लोग इन आदेशों की पालना करते हैं उन्हें सर्वोत्तम व्यक्तियों की संज्ञा दी जाती है तथा जो लोग इन पर विश्वास नहीं करते उन्हें धर्म-द्रोही कहा जाता है। उनको मिटाना धर्म-प्रेमियों का प्रथम कर्त्तव्य बन जाता है। इस प्रकार की शिक्षाओं से धर्म संगठन अस्तित्व में आते हैं और बाद में विश्व में अपने धार्मिक साम्राज्य की कल्पना आकार लेने लगती है। पूर्व के धर्मों में ईश्वर-प्राप्ति के लिए आध्यात्मिक विकास की ही आवश्यकता है। इस विकास के लिए न संगठनात्मकता की आवश्यकता है और न ही साम्राज्यों की। अपने ईश्वर में विश्वास बनाने के लिए न युद्धों की आवश्यकता है तथा न बलिदानों और कुर्बानियों की आवश्यकता है। इन धर्मों में आवश्यकता है केवल व्यक्तिगत संयम, संतोष तथा अनुशासन की, जहां आध्यात्मिक विकास का शिखर ईश्वर-प्राप्ति है।

भारतीय इतिहास के मध्य काल में अनेकों संतों, भक्तों, ऋषियों, गुरुओं और पैगम्बरों ने मानव को आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त करने के विभिन्न उपाय बताए। ये उपाय मानव के विकारों को दूर करने, संयम और संतोष जैसे तत्त्वों पर आधारित थे। इन उपायों से साधना

**निदेशक, स्वामी सर्वानंद कॉलेज ऑफ ऐजूकेशन, दीनानगर (गुरदासपुर)*

सरल बन जाती है और भक्ति-मार्ग पर यात्रा भी आगे बढ़ती रहती है। माध्य काल के संतों ने व्यक्ति-उत्थान के साथ सामाजिक उत्थान पर भी ध्यान केंद्रित किया है। सामाजिक बुराइयों से लड़ना, धार्मिक आडम्बरों को तोड़ना और समाज को स्वस्थ दृष्टि प्रदान करना अपने आप में एक महान कार्य है। विद्वानों ने इसे ही शक्ति कहा है। भक्ति और शक्ति का सुमेल भारतीय चिन्तन का एक तत्त्व कहा जा सकता है। पश्चिमी धर्मों में ईश्वरीय आशाओं का पालन और संगठन के प्रति निष्ठा रख कर इन तत्त्वों की प्राप्ति की जा सकती है, किन्तु भारतीय धर्मों में इन दोनों तत्त्वों के विलक्षण सुमेल को अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। भक्ति तथा शक्ति के संकल्प को समझना तथा इसे विकसित करना भारतीय चिन्तनधारा की विश्व को महान देन है।

प्राचीन काल में भारतीय चिन्तन परंपरा बुद्ध धर्म के रूप में विश्व में प्रफुल्लित हुई, किन्तु उत्तर वैदिक काल में धार्मिक आडंबरों और अनेक विधि-विधानों के कारण साधारण व्यक्ति आस्थाहीन होने लगा था। वर्ण-व्यवस्था जाति-प्रथा में परिवर्तित होने लगी थी तथा जातिगत भेद अधिक कठोर तथा गहरे हो गए थे। तथाकथित श्रेष्ठ जातियों एवं वर्गों द्वारा निम्न जातियों के शोषण से हमारी सामाजिक व्यवस्था जर्जर हो गई थी; हमारी महान सांस्कृतिक परम्पराएं खंडित होने लगी थीं। इस प्रकार की अस्त-व्यस्त धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्था से लाभ उठा कर इस्लामी देशों ने भारत पर आक्रमण करने शुरू कर दिए थे।

इन आक्रमणकारियों ने भारत को न केवल आर्थिक रूप में लूटा बल्कि सांस्कृतिक रूप में विकलांग भी बना दिया था। आक्रमणकारियों ने राजनीतिक दृष्टि से भारत को पराजित कर उसकी आत्मा को भी कुचल दिया। शताब्दियों की परतन्त्रता के कारण भारतवासियों में स्वाभिमान की भावना बिल्कुल मृत प्राय: हो गई थी। हमारे आदर्श, हमारी महान परम्पराएं, हमारे जीवन-मूल्य समय के भीषण प्रहारों से क्रांति-विहीन होने लगे थे। छोटे-बड़े सामन्त हतोत्साहित थे। साधारण व्यक्ति निराश था। देश के गौरव का सूर्य अस्त होने को था। उस समय पहले श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी ने मीरी-पीरी की प्रतीक दो तलवारें पहनकर मीरी-पीरी का सिखी-सिद्धांत प्रतिपादित किया। तत्पश्चात श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने खालसा पंथ की सृजना करके भारतवासियों के स्वाभिमान को जागृत किया और जन साधारण में देश तथा धर्म के लिए कुर्बान होने की भावना को पैदा किया। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने भक्ति और शक्ति का सुमेल करके महान भारतीय परम्परा को पुनर्जीवित ही नहीं किया बल्कि इस भावना का जन-जन में संचार भी किया। जाति-प्रथा के कारण भारतीय समाज जर्जर हुआ था। गुरू जी ने इस प्रथा को पूर्णरूपेण नकार दिया और सम्पूर्ण मानव जाति को एक ईश्वर की संतान माना था।

खालसा पंथ का उदय भारतीय समाज में एक क्रांति थी, जिसने धर्मों-जातियों में बंटी हुई मानव जाति को जीवन जीने की नई कला सिखाई। यह परिवर्तन किसी वाह्य सामाजिक ढांचे को भारतीय समाज पर लाद कर नहीं लाया गया बल्कि प्राचीन भारतीय चिंतनधारा को समय के अनुकूल बना कर परिवर्तन को सहज एवं सुगम बनाया गया। खालसा पंथ के महान साधकों ने अपनी सांस्कृतिक विरासत को छोड़ कर किसी अन्य समाज की विरासत को

स्वीकार करने वालों की घोर निन्दा की है। श्री गुरू नानक देव जी ने अपनी भाषा तथा सभ्यता को छोड़ कर विदेशी सभ्यता की नकल करने वाले भारतीयों की भर्त्सना की है। आज भी अनेक भारतीय अपनी विरासत को त्याग कर अमेरिकी सभ्याचार को अपना कर अपने सभ्य कहलाने का दंभ करते हैं। ऐसे लोगों को क्या कहा जाए?

श्री गुरू नानक देव जी ने प्राचीन भारतीय चिंतन परम्परा का गहन अध्ययन तथा विश्लेषण किया था। भाई गुरदास जी भी प्राचीन भारतीय साहित्य के महा ज्ञाता थे। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने संस्कृत तथा प्राचीन भारतीय साहित्य का अध्ययन करने के लिए 'निर्मल पंथ' तैयार किया। सिख धर्म के अनुयाइयों ने प्राचीन भारतीय ग्रंथों का अध्ययन मशीनी ढंग से नहीं किया बल्कि इसके उन बिंदुओं का मनन किया है जिनका सीधा संबंध मानव के आध्यात्मिक विकास से था। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी को भारतीय इतिहास का बहुत ज्ञान था। यह ज्ञात हो कि किसी समाज में परिवर्तन लाने के लिए इतिहास का ज्ञान परम आवश्यक है। उन्होंने इतिहास की न्यूनताओं को 'खालसा पंथ' की साजना करके पूरा किया। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने सभी धर्मों एवं संगठनों के सिद्धांतों का गहन अध्ययन किया। गुरू जी ने ऐसे सिद्धांतों का निर्माण किया जिसमें संपूर्ण कायनात समा जाती है।

इस उपमहाद्वीप में रहने वाले प्रत्येक नागरिक की संस्कृति एक है किन्तु धर्म एक नहीं है। इस धरती पर अनेक धर्मों ने जन्म लिया है और उन्होंने अपने-अपने ढंग से इस देश की संस्कृति को समृद्ध किया है। प्रत्येक धर्म अपने आप में स्वतंत्र है। कोई भी धर्म किसी बड़े अथवा छोटे धर्म का अंग अथवा उप-अंग नहीं है। प्रत्येक धर्म ने अपने ऐतिहासिक दायित्व का पूर्ण निष्ठा के साथ निर्वहन किया है। इस संदर्भ में यह भी कहा जा सकता है कि खालसा पंथ ने अपने जन्म-काल से लेकर आज तक भारत के गौरव और गरिमा की रक्षा अपना रक्त बहा कर की है। गुरू साहिब ने खालसा पंथ की सृजना किसी धर्म से बदला लेने के लिए नहीं की थी, उन्होंने तो सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए भक्ति और शक्ति का सुमेल करके एक अद्भुत धर्म को जन्म दिया था, इसलिए इस धर्म के अनुयाइयों में 'संत-सिपाही' के संकल्प की धारणा परिपक्व हुई है। ■

आपका पत्र मिला 

पत्रिका काबिले-तारीफ है

'गुरमति ज्ञान' का नवंबर २००७ अंक डाक से प्राप्त हुआ। पत्रिका काबिले-तारीफ है। प्रकाशित रचनाएँ रोचक, ज्ञानवर्धक, पठनीय और संग्रहणीय हैं। गुरू गोबिंद सिंघ जी और गुरू नानक साहिब का व्यक्तित्व और कृतित्व चमत्कारित रहा है। आज हमें गुरू साहिबान के विचारों को हृदयंगम करने की जरूरत है। उनके विचारों पर चलकर मनुष्य लोक और परलोक दोनों को सुधार सकता है।

-श्रीकान्त व्यास

पो बॉक्स नं. १६, जी. पी. ओ. पटना।

गुरबाणी चिंतनधारा-१६

जापु साहिब की विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

नमसतं अगंमे ॥ नमसतसतु रंमे ॥
नमसतं जलासरे ॥ नमसतं निरासरे ॥१६॥

हे प्रभु! तुझे नमस्कार है। तू जीवों के मन की पहुंच से परे है। तू सबके मन की जानने वाला अर्थात अंतरयामी है। लेकिन तू संसारी जीवों के मन व बुद्धि की पहुंच से बहुत दूर है। हे सुंदर, मनोहर स्वरूप वाहिगुरू! तुझे मेरी नमस्कार है। तू अथाह सागर है। तेरा अंत कोई नहीं पा सकता। तुझे किसी सहारे की आवश्यकता नहीं। कहने का अभिप्राय, तू समस्त जीवों का प्राणाधार है अर्थात् सबको तेरा ही सहारा है। समस्त खंडों-ब्रह्मंडों, तीनों लोकों के जीव तुझ पर ही आश्रित हैं। हे परमात्मा! तू किसी पर भी आश्रित नहीं। परमात्मा के इस स्वरूप को भी गुरदेव नमस्कार करते हैं।

नमसतं अजाते ॥ नमसतं अपाते ॥
नमसतं अमजबे ॥ नमसतसतु अजबे ॥१७॥

हे परमात्मा! तुझे नमस्कार है। कलगीधर पातशाह उस परवरदिगार के समस्त स्वरूपों को नमन करते हुए इस बंद में फरमान करते हैं कि हे वाहिगुरू! तेरी कोई विशेष जाति नहीं। न ही तेरी कोई विशेष कुल है और न ही तेरा कोई खास मत (महजब) है अर्थात तू किसी एक धर्म विशेष का नहीं कहलाता। तेरा स्वरूप आश्चर्यजनक है अर्थात तू अद्भुत है, निराला है। तेरे इस अचरज रूप को भी मेरी नमस्कार है।

आओ! इस तथ्य पर विचार करें कि ईश्वर जाति, धर्म, कुल से रहित है। उसने जो रचना की उसमें भी जाति, रंग, कुल, धर्म का कोई भेद नहीं किया। अपने-अपने स्वार्थों की सिद्धि हेतु जब कुछ तथाकथित शिक्षक वर्ग वालों ने जातिगत भेदों की आड़ में अपना उल्लू सीधा करना चाहा तो कुछ ऐसे धर्म प्रचारक भी हुए जिन्होंने समय-समय पर उस ईश्वर के पावन सन्देश को लोगों तक पहुँचा कर मजहब की दीवारों को धराशायी कर, फिर उस परम पिता से जोड़ने हेतु इन्सानियत का पाठ पढ़ाया। पावन गुरबाणी की कुछ पावन पंक्तियों का उल्लेख यहां पर करना आवश्यक प्रतीत होता है:

-ना हम हिंदू न मुसलमान ॥
अलह राम के पिंडु परान ॥ (पन्ना ११३६)

-सभ महि जोति जोति है सोइ ॥
तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥ (पन्ना १३)

-अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ (पन्ना १३४९)

-एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥ (पन्ना ६११)

-ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ (पन्ना १२९९)

इसी भाव को पुष्ट करती पंक्तियां श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी की बाणी में देखी जा सकती हैं:

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४*

देहुरा मसीत सोई पूजा औ निवाज़ ओई,
मानस सबै एक पै अनेक को भ्रमाउ है ॥
देवता अदेव, जच्छ गंध्रब तुरक हिंदू,
निआरे निआरे देसन के भेस को प्रभाउ है ॥
एकै नैन एकै कान एकै देह एकै बान,
खाक बाद आतिश औ आब को रलाउ है ॥
अल्लह अभेख सोई पुरान अउ कुरान ओई,
एक ही सरूप सबै एक ही बनाउ है ॥८६॥
(अकाल उसतत)

स्पष्ट है कि वह परमात्मा निराकार स्वरूप होते हुए भी अद्भुत ढंग से सब में साकार रूप में विद्यमान है। अत: तेरे इस निराले व आश्चर्यजनक स्वरूप को नमस्कार है।

अदेसं अदेसे ॥ नमसतं अभेसे ॥
नमसतं न्रिधामे ॥ नमसतं न्रिबामे ॥१८॥

हे अकाल पुरख! तुझे मेरी नमस्कार है। 'आदेसु' शब्द नमस्कार के अर्थ में जपु जी साहिब में उस अकाल पुरख के लिए श्री गुरू नानक देव जी ने भी प्रयोग किया है, यथा–

आदेसु तिसै आदेसु ॥
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ *(पन्ना ६)*

भावार्थ हमारी उस परमेश्वर को नमस्कार है जो आदि तथा अंत से रहित है। वह अनादि अनंत युगों-युगांतरों से एक ही रूप में व्यापक सत्य स्वरूप सदा स्थिर है। भाई गुरदास जी उस अकाल पुरख को आदेसु करते है:

आदि पुरखु आदेसु है ओहु वेखै ओन्हा नदरि न आइआ। *(वार २६:२)*

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी उपरोक्त बंद में परवरदिगार को नमस्कार करते हुए फरमान करते हैं कि हे प्रभु! तुझे मेरी इसलिए भी नमस्कार है कि तेरा कोई खास ठिकाना नहीं जहां तू निवास करता है। तू तो सर्वव्यापक है और तुझे किसी स्त्री ने पैदा नहीं किया। अत: हे ईश्वर! देश-रहित, वेश-रहित, किसी विशेष घर-रहित, स्त्री की कोख से जन्म-रहित, विलक्षण स्वरूप परमात्मा! तुझे नमस्कार है।

नमो सरब काले ॥ नमो सरब दिआले ॥
नमो सरब रूपे ॥ नमो सरब भूपे ॥१९॥

हे ईश्वर! तुझे नमस्कार है। उपरोक्त बंद में गुरदेव ने दोनों रूपों (ईश्वर) के संहारक व दयालु स्वरूप का वर्णन किया कि हे ईश्वर, तू संसार के जीवों को नाश करने वाला है अर्थात् संहार करने वाला है। तू ही समस्त जीवों पर दया करने वाला है। तू कृपालु व दयालु सागर है। समस्त रूपों में तू ही समाया है अर्थात् जितने भी रूप दृष्टिगत होते हैं वे सब तेरे ही रूप हैं। हे समस्त प्राणियों में मौजूद प्रभु! तुझे नमस्कार है। तू ही संसार के सभी जीवों का भूप अर्थात् राजा है। गुरबाणी में अनेक स्थलों पर परमात्मा को बादशाहों का बादशाह कहा है।

नमो सरब खापे ॥ नमो सरब थापे ॥
नमो सरब काले ॥ नमो सरब पाले ॥२०॥

इस बंद में गुरदेव पातशाह जी ने उस परमास्मा के तीनों (सृजनकर्त्ता, पालनकर्ता एवं संहारकर्ता) रूपों का वर्णन किया है। *'नमो सरब खापे'* अर्थात हे ईश्वर! तुझे नमस्कार है। तू समस्त प्राणियों को नाश करने वाला है, तू ही सब जीवों को 'थापे' अथवा स्थापित कर, आसरा देने वाला है अर्थात् तू ही सबका सहारा है। तू सबका काल स्वरूप है अर्थात् सब जीवों को नष्ट करने वाला है। तू सब जीवों को पालने वाला है। इसलिए तेरे समस्त रूपों को नमस्कार है।

■

विस्मादी वृत्तांत-११

घालि खाइ किछु हथहु देइ

*-डॉ. अमृत कौर**

सैदपुर के शहर में भाई लालो की कुटिया में गुरू नानक साहिब विराजमान हैं। संगत जुड़ी है। भाई मरदाना जी मस्ती में झूमते हुए रबाब बजा रहे हैं और गुरू नानक साहिब सुरीली धुन में गा रहे हैं:

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥
जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥
(पन्ना १५)

भाई लालो की कुटिया में बहार छाई है। चारों ओर शान्ति और उल्लास का वातावरण है। उसके पांव पृथ्वी पर नहीं टिक रहे। जब से वह गुरू जी के सम्पर्क में आया है उसकी सोई आत्मा जाग उठी है, उसका जीवन ही परिवर्तित हो गया है। ज्ञान और भक्ति के प्रकाश से उसके मन का अंधकार दूर हो गया है। पहले वह अपने आप को एक तुच्छ बढ़ई समझता था, गुरू जी को अपनी रूखी-सूखी रोटी खिलाने में संकोच करता था, परन्तु गुरू नानक साहिब के प्यार और सत्कार ने उसमें आत्म-विश्वास और आत्म-सम्मान पैदा कर दिया है। गुरू जी जब भी इस ओर आते हैं उसके पास ही ठहरते हैं। नाम खुमारी ने उसे और उसकी पत्नी दोनों को मदमस्त बना दिया है। कितने प्यार और सत्कार के साथ वह उनके लिए रोटी बनाती और खिलाती है! दैवी संगीत का भी अजीब जादू होता है। श्री गुरू नानक देव जी ने संगीत रस और नाम खुमारी में डूबे अपने अर्धनिमीलित नेत्र खोले और बोले, "भाई लालो, कितना स्कून है तुम्हारी इस कुटिया में! कितना प्यार और सुगन्धि है तुम्हारी इस झोंपड़ी में! तुम्हारी यह झोपड़ी तो भली सुहावी कुटिया है, जहां दिन-रात प्रभु का कीर्तन होता रहता है।"

भाई लालो विनम्रता से बोला, "मैं धन्य हूं महाराज, जो मुझ कंगाल के घर में दुनिया का उद्धार करने वाला आया है। आप हम तुच्छ जीवों को सम्मान देते हो, हमें गले से लगाते हो, हमें ऊंचा उठाते हो, हमें अपने बराबर बिठाते हो, हमारे हाथ का पका खाते हो। कहां आप और कहां मैं तुच्छ बढ़ई? आपका हम गरीबों को अपनाना, गले से लगाना हमारे लिए गौरव का विषय है। अब हम भी सिर उठा कर चल सकते हैं, इज्जत और सम्मान से जी सकते हैं।"

"भाई लालो! तुम अपने आप को कभी तुच्छ मत समझो। जो धर्मी नेक पुरुष कड़े परिश्रम से जीविका-अर्जन करके स्वयं खाता है तथा औरों को खिलाता है, वही श्रेष्ठ है। मेरा साथी भाई मरदाना शूद्र नहीं, बल्कि श्रेष्ठ है। यह दिन-रात दैवी संगीत और नाम खुमारी में डूबा रहता है। इसने घर के सुख-आराम को छोड़ दिया है। यह मेरा सदीवी साथी है। मैं अमीर लोगों का भोजन खाने को तैयार नहीं, जो पाप की कमाई करते हैं, जो पाखंड और धोखे का जाल बिछा कर परिश्रमी मजदूरों-श्रमिकों की परिश्रम की कमाई लूटते हैं और नीच कहलाने वाली जातियों का खून पीकर ऐशो-आराम का जीवन व्यतीत करते हैं। ये

**१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, ज़ीरकपुर-१४०५०३*

लोग तो जगत-कसाई हैं। ऐसे लोगों का भोजन खाकर तो मन में विकार चलते हैं:

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥
जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥"
(पन्ना १६)

"ऐसे लोगों का अन्न ग्रहण कर तो मन को पीड़ा पहुंचती है। सच्चे ब्राह्मण तो तुम हो जिसने ब्रह्म को हृदय में बसाया है, जाना है और जो पाप तथा बुराई को अपने समीप नहीं आने देते। तुम्हारे भोजन में अजीब स्वाद है, क्योंकि तुम परिश्रम से जीविका-अर्जन करते हो। तुम्हारी रसोई पवित्र रसोई है। तुम्हारा परिवार नाम-सुमिरन करते-करते कितने आदर-प्यार और सम्मान से भोजन बनाता, खिलाता, तन-मन से सेवा करता है! जो कुछ भी घर में तैयार है, लाओ, हम ग्रहण कर प्रसन्न होंगे।"

"महाराज भोजन तैयार है, ग्रहण कीजिए।"

"हां भाई, जोरों से भूख लगी है, भोजन परोस दो।"

कोधरे की रोटी और सरसों का साग। पर गुरू जी बड़े चाव और आनंद से खा रहे हैं। भाई लालो की पत्नी खाना परोस रही है। भाई लालो पंखा झल रहे हैं। इतने में मलिक भागो का आदमी आया, "गुरू जी! मलिक भागो के यहाँ ब्रह्म-भोज है। आपको न्यौता भेजा था। सारा शहर और साधू-जन निमन्त्रित हैं। पर आप उनका न्यौता अस्वीकार कर इस बढ़ई की कुटिया में ठहर कर और भोजन करके सरासर मलिक साहिब का अपमान कर रहे हैं। आप इसी समय हमारे साथ चलिए, यह उनका आदेश है।"

गुरू जी ने मुस्करा कर उत्तर दिया, "भाई! हम तो खुदा के बन्दे हैं और उस खुदा के हुक्म को ही मानते हैं। हमें बड़े लोगों से क्या लेना-देना? जो सुख हमें भाई लालो की कुटिया में मिलता है वह तुम्हारे मलिक भागो के महलों में कहां! उसके महल तो गरीबों के शोषण से बने हैं। उसके घर की दीवारों में तो मुझे गरीबों की आहें और चीत्कारें सुनाई देती हैं। उन गरीबों की आहें जिन्हें पकड़ कर वह बेगार कराता है, उन गरीब किसानों की आहें जो साल भर परिश्रम करते हैं परन्तु उनका अन्न वह छीन कर ले जाता है।"

गुरू जी के इन शब्दों से मलिक भागो का आदमी निरुत्तर हो गया। गुरू जी की ओजस्वी सच्ची बाणी का उसके पास कोई उत्तर नहीं था। उसने स्वयं देखा था मलिक भागो को गरीबों का शोषण करते। वह गुरू जी को क्या उत्तर देता? निरुत्तर होकर चला गया और जाकर मलिक भागो को बताया कि गुरू जी ने आने से इन्कार कर दिया है।

मलिक भागो इन्कार सुन आग-बबूला हो गया। गुरू जी का यह साहस कि वह आने से इन्कार कर दे? दूसरे आदमी को सख्त हिदायत के साथ भेजा कि जाओ और गुरू जी को जबरदस्ती यहां लाओ। दूसरे आदमी ने जाकर गुरू जी से प्रार्थना की-"गुरू जी! मलिक जी ने आपको सहभोज पर बुलाया है। वे यहां के शासक हैं। उनकी आज्ञा का उल्लंघन आपके लिए उचित न होगा। सभी साधूजन बैठे आपका इंतजार कर रहे हैं। किसी में उनकी आज्ञा का उल्लंघन करने का साहस नहीं। आपको तुरन्त मेरे साथ चलना होगा, यह उनका आदेश है।"

गुरू जी ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "भाई साहिब! मैं पहले भी यह कह चुका हूं कि मुझे मलिक भागो के यहां भोजन नहीं करना। उसकी कमाई नेक कमाई नहीं। मुझे भाई लालो की रोटी में से दूध जैसा स्वाद आता है क्योंकि उसकी कमाई नेक कमाई है। वह परिश्रम से अपनी जीविका कमाता है। अपनी नेक कमाई में से सुविधानुसार दान भी देता है। घर आए

अतिथि-जनों की सेवा और सत्कार करता है, प्रभु का सुमिरन करता है। उसके हाथ काम में संलग्न रहते हैं और मन प्रभु-चरणों में लीन। वह तीन नियमों—काम करना, बांट कर खाना और नाम जपना पर चलता है। अत: मुझे यह प्रिय है। मुझे मलिक भागो जैसे बड़े लोगों से क्या लेना-देना जो पाप से धन कमाते हैं!"

मलिक भागो का दूसरा आदमी भी निरुत्तर वापिस चला गया और उसने मलिक भागो को सभी बातें विस्तारपूर्वक बताईं। मलिक भागो के क्रोध का पारावार न रहा—"उनकी यह हिम्मत कि आने से इन्कार कर दिया और ऊपर से मेरे अन्न को शोषण का अन्न बताते हैं? मैं यहां का शासक और मेरी आज्ञा का उल्लंघन?" वह क्रोध से भड़क उठा। उसने ब्राह्मणों को भड़काया कि गुरू जी ब्राह्मणों और क्षत्रियों का अपमान करते हैं। क्षत्रिय बेदी कुल में उत्पन्न होकर भी नीच बढ़ई के यहां ठहरते हैं और उनके हाथ का पका खाना खाते हैं। यह तो हम सबका सरासर अपमान है। उसने भाई लालो को शहर से धक्के मार कर निकालने और उसका घर-बार उजाड़ देने की धमकी दी। चार प्यादे भेजे कि गुरू जी को जबरदस्ती यहां लेकर आओ।

गुरू जी प्यादों के साथ भाई लालो को साथ लेकर चल पड़े। गुरू जी मलिक भागो के यहां पहुंचे। मलिक भागो उनको देख कर क्रोधित स्वर में बोला, "आप बेदी कुल के क्षत्रिय हो। आपने ब्रह्मभोज में आने से इन्कार कर हमारा अपमान किया है। मुझे समझ नहीं आती कि आप हमारे छत्तीस प्रकार के व्यंजनों को छोड़ कर इस नीच बढ़ई की रूखी-सूखी रोटी खाना क्यों पसन्द करते हैं? लालो जैसे नीच व्यक्ति के घर भोजन कर आप अपना धर्म भ्रष्ट कर रहे हैं, अपनी कुल को अपमानित कर रहे हैं।"

बाबे नानक ने कहा, "देख अरे, ओ माया के दीवाने! इन पकवानों में तुम्हारे अत्याचारों का विष है, गरीबों के शोषण का लहू है। भाई लालो की कोधरे की रोटी में उसके परिश्रम का अमृत है, उसके परोपकार की मिठास है, उसकी सादगी और सच्चाई का स्वाद है।"

मलिक भागो अपने ब्रह्मभोज के पकवानों का अपमान सुनकर फिर भड़क उठा। आग-बबूला हो उल्टा-सीधा बोलने लगा। गुरू जी बोले, "मलिक भागो! जरा सोच कितनों का तुमने अधिकार छीना है? कितनों का रक्त पीया है? शोषण और रिश्वत से कितनों से धन इकट्ठा किया है? इस पाप की कमाई से तुमने ब्रह्मभोज तैयार किया है। इसमें मुझे तेरे द्वारा निचोड़ा गरीबों का रक्त दीख रहा है। यह ब्रह्मभोज नहीं, पाप के पकवान हैं। गरीबों के लहू से बना अमीरों का भोजन है। कौन इस भोजन को खा सकता है और कौन इस भोजन को खाकर पचा सकता है?

जे रतु लगै कपड़ै जामा होइ पलीतु ॥
जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु ॥"
(पन्ना १४०)

"दूसरी ओर भाई लालो की कोधरे की रोटी में से उसकी नेक कमाई रूपी दूध टपक रहा है। इसे खाकर कमजोर से कमजोर आत्मा भी बलवान बन जाती है।"

सभी यह देख-सुनकर आश्चर्यचकित हो गए। मलिक भागो उस दोषी के समान मौन हो गया जिसके सारे पाप लोगों के सामने नंगे हो गए हों। वह नतमस्तक हो गिड़गिड़ाने लगा, "गुरू जी, मुझे क्षमा करें। मैं पापी हूं। मैंने गरीबों को बहुत सताया है। सचमुच ही मैंने अब तक गरीबों के लहू को निचोड़ा है। आपने मेरी चिरकाल से बंद ज्ञान व अनुभव की आंखें खोल दी हैं। मैं अपने किये पर बहुत शर्मिंदा हूं। मेरा मार्गदर्शन कीजिए।

मलिक भागो गुरू जी के चरणों में गिर

पड़ा। पश्चाताप के आंसुओं से उसके मन की कालिमा धुलने लगी। गुरू जी ने उसे उठाया और कहा, "यह मार्ग त्याग दो। ब्राह्मणों के दान के लिए जिन गरीबों से गऊएं छीनी हैं, उन्हें वापिस कर दो; जिन गरीब किसानों से साल भर के परिश्रम का अन्न छीना है, वह उन्हें लौटा दो; जिन निर्दोष व्यक्तियों का शोषण कर तुम अमीर बने हो, उनका धन वापिस कर दो-*पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ॥* तुम इस इलाके के शासक हो। तुम्हारा कर्त्तव्य इन लोगों की सेवा करना है, रक्षा करना है, इनका भक्षण और अत्याचार करना नहीं। यह असीम संचित धन गरीबों में बांट दो, परिश्रम से, मेहनत से नेक कमाई करो, उसमें से जरूरतमन्दों को दान दो, यही सही मार्ग है:

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥" *(पन्ना १२४५)*

■

श्री गुरू हरिराय साहिब जी

(पृष्ठ ३४ का शेष)

प्रकार राजाओं ने उपदेश लेकर प्रजा की भलाई के लिए तालाब, कुएं, धर्मशालाएं बनाईं और पाठशालाएं खोलीं।

श्री गुरू हरिराय साहिब जी के दो पुत्र रामराय और (गुरू) हरिक्रिशन जी थे। जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है रामराय गुरू जी की आज्ञा का उल्लंघन कर चुका था। बाद में सरकारी हाकिमों और गुरू-घर के विरोधी धीरमल के साथ मिलकर गुरगद्दी की खातिर अपना प्रभाव डाला पर गुरू जी उसकी चालों में न आए।

जब श्री गुरू हरिराय साहिब जी ने जाना कि उनके सचखंड जाने का समय आ गया है तो अपने साहिबजादे श्री (गुरू) हरिक्रिशन जी का गुरगद्दी के लिए चयन किया और सारी संगत को आदेश दिया कि वे रामराय और गुरू-घर के विरोधियों के झांसे में न आएं और श्री (गुरू) हरिक्रिशन जी को अपना गुरू मानें। गुरगद्दी की जिम्मेदारियां अपने छोटे सपुत्र श्री (गुरू) हरिक्रिशन जी को सौंप कर ५ कार्तिक, सं. १७१८ तदनुसार ६ अक्तूबर, १६६१ रविवार के दिन कीरतपुर में ज्योति-जोत समा गए। गुरू जी के शरीर का अंतिम संस्कार सतलुज के किनारे पातालपुरी में किया गया। उस पावन स्थान का नाम गुरुद्वारा पातालपुरी कीरतपुर साहिब है।

गुरू जी के आदर्श जीवन से शिक्षा : गुरू जी का सम्पूर्ण जीवन मानवता की सेवा, सच का प्रचार करने में व्यतीत हुआ। परोपकार को जारी रखना, सरबत्त का भला करना, भूखों को भोजन देना, बेसहारा लोगों को सहारा देना, पेड़-पौधों की सुंदरता को बनाए रखना, जीव-जंतुओं की रक्षा करना, मानवता से प्यार करना, बाणी का सत्कार करना तथा नाम जपने का सभी को उपदेश देना।

महाकवि भाई संतोख सिंघ जी गुरू साहिब के बारे में इस प्रकार वर्णन करते हैं कि श्री गुरू हरिराय साहिब जी के नाम का स्मर्ण करने से पाप नष्ट हो जाते हैं। हे मेरे मन! उनके श्रेष्ठ चरणों को प्रणाम कर जिससे तू नौ-निद्धियां और अट्ठारह सिद्धियां प्राप्त कर सके:

श्री सतिगुर हरिराय के, नाइ धयाइ आप जांइ।
करि पद पर प्रणाम को, जिह ते निधि सिधि आइ ॥ *(श्री गुरू नानक प्रकाश)*

■

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-५

विनम्रता की मूर्ति-कवि सुदामा जी

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ**

श्री गुरू तेग बहादर जी द्वारा बसाया और दशम पातशाह साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी द्वारा समृद्ध बनाया गया शहर आनंदपुर साहिब जहां एक ओर बड़ी तेजी से आर्थिक-राजनीतिक शक्ति के रूप में उभरा वहीं दूसरी ओर यह साहित्य के एक अति महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में तथा खालसा पंथ की जन्म-भूमि के रूप में भी विकसित हुआ। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी स्वयं एक उच्च कोटि के साहित्य-सृजक और बहु-भाषाविद् थे। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि आनंदपुर साहिब में विद्वानों एवं साहित्यकारों को इतना सम्मान मिलता था। गुरू साहिब के दरबार की यह कीर्ति शीघ्र ही पूरे भारत में फैल गई। अनेक कवि-कोविद दूर-दूर से आनंदपुर साहिब आने लगे। गुरू साहिब की साहित्य-प्रेमी प्रवृत्ति से आकर्षित होकर आनंदपुर साहिब आने वालों में एक प्रमुख कवि थे—कवि सुदामा।

कवि सुदामा कवि बुदेलखंड के निवासी थे। बुदेलखंड उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश की सीमाओं पर फैला हुआ क्षेत्र है, जिसमें झांसी, ललितपुर, महोबा, बांदा, सागर जैसे जिले शामिल हैं। इसी क्षेत्र में कहीं कवि सुदामा का गांव था, जहां उन्होंने श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी और आनंदपुर साहिब की महिमा सुनी होगी और फिर यह कवि आनंदपुर साहिब आ गया होगा। इसके अतिरिक्त कवि सुदामा के विषय में न तो सिख इतिहास के स्रोतों से कोई जानकारी उपलब्ध होती है और न ही हिंदी साहित्य-इतिहासों में ही इस कवि के बारे में कोई ज़िक्र मिलता है। मात्र भाई कान्ह सिंघ नाभा ने अपने गुरमति-चिंतन संबंधी ग्रंथों 'महान कोश', 'गुरमति सुधाकर' और 'गुरमति मारतंड' आदि में सुदामा कवि के कुछ कबित्त और सवरयों को उद्धृत किया है। इन मुक्तकों के अध्ययन से पता चलता है कि सुदामा कवि ब्रज भाषा में काव्य रचना करने वाले काव्य कला और काव्य शास्त्र के मर्मज्ञ कवि थे। काव्य-शास्त्रीय दृष्टि से परिशुद्ध उनके कबित्त-सवरयों में सुंदर प्रतीकात्मकता, सांकेतिकता और अलंकारों का प्रयोग किया गया है। कवि सुदामा के काव्य का मुख्य विषय अपने आश्रयदाता दशम पिता साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का गुणगान करता रहा है। उदाहरण के लिए कवि सुदामा का एक कबित्त दृष्टव्य है:

एकै संगि पढै हैं अवंतिका संदीपिनी के,
सोई सुध आई तौ बुलाइ बूझी बामा मै,
पुंगीफल होत तो असीस देतो नाथ जी को,
तंदुल ले दीने बांध लीने फटे जामा मै,
दीन दयालु सुनकै दयालु दरबार मिले,
ऐतो कुछ दीनो पाइ अगनित सामा मै,
प्रीति कर जानै गुरु गोबिंद के मानै तांते,
वही तूं गोबिंद वही बामन सुदामा मैं।

कवि सुदामा ने इस कबित्त में श्री कृष्ण और उनके प्रिय मित्र सुदामा की मित्रता का प्रसंग लेते हुए स्वयं को दीन-हीन ब्राह्मण 'सुदामा' कहा है और श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी को पलक झपकते समस्त निधियां प्रदान करने वाले 'गोबिंद' अर्थात 'श्री कृष्ण' माना है। इस प्रकार कवि ने 'गोबिंद' और 'सुदामा' में 'श्लेष अलंकार' का प्रयोग करते हुए पंक्ति में चमत्कार भी उत्पन्न किया है और अपने हृदय की असीम श्रद्धा और भक्ति-भावना को भी प्रकट कर दिया है। सिख ऐतिहासिक स्रोतों के अनुसार कवि सुदामा कुछ समय के लिए आनंदपुर साहिब में रहे। यहां से पहले का और यहां से बाद का कवि सुदामा का जीवन-वृत्त सम्यक शोध के अभाव में अज्ञात है। ■

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा, लुधियाना।*

खबरनामा

जत्थेदार अवतार सिंघ तीसरी बार शि: गु: प्र: कमेटी के अध्यक्ष बने

अमृतसर: २३ नवंबर को शि: गु: प्र: कमेटी के मुख्य कार्यालय तेजा सिंघ समुद्री हाल में शिरोमिण कमेटी सदस्यों द्वारा जत्थेदार अवतार सिंघ को तीसरी बार सर्वसम्मति से अध्यक्ष पद के लिए चुन लिया गया।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब की पावन अगुआई तथा पांच सिंघ साहिबान की उपस्थिति में वार्षिक अधिवेशन का शुभारंभ अरदास कर हुक्मनामा लेने के बाद प्रारम्भ हुआ। सारी प्रक्रिया शांतिपूर्ण ढंग से निर्विघ्न सम्पूर्ण हुई। जत्थेदार अवतार सिंघ को अध्यक्ष निर्वाचित करने के पश्चात वरिष्ठ उपाध्यक्ष पद के लिए स. रघुजीत सिंघ, कनिष्ठ उपाध्यक्ष के लिए स. केवल सिंघ बादल तथा महासचिव पद के लिए स. सुखदेव सिंघ भौर का भी चयन सर्वसम्मति से कर लिया गया। ग्यारह कार्यकारिणी सदस्यों में कुछ परिवर्तन कर अग्रलिखित सदस्यों को शामिल कर लिया गया—स. रजिंदर सिंघ मेहता, स. संतोख सिंघ, संत टेक सिंघ धनौला, स. सूबा सिंघ डब्बवाला, स. गुरबचन सिंघ करमूंवाला, स. दयाल सिंघ कोलियांवाली, बीबी भजन कौर डोगरांवाला, स. सुरजीत सिंघ गढ़ी, स. निरमैल सिंघ जौलांकलां, स. करनैल सिंघ पंजोली और स. गुरविंदर सिंघ शामपुरा।

अधिवेशन की समाप्ति श्री गुरू ग्रंथ साहिब की हजूरी में अरदास करके हुक्मनामा लेने के पश्चात की गई।

श्री हरिमंदर साहिब में प्रदूषण पर शि: गु: प्र: कमेटी गंभीर

अमृतसर: शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा है कि श्री हरिमंदर साहिब परिसर को प्रदूषण-मुक्त करने के लिए शिरोमणि कमेटी गंभीर है। उन्होंने कहा कि गुरुपर्वों, बंदी छोड़ दिवस (दीपावली) के साथ-साथ वैसाखी आदि पर्वों पर श्री हरिमंदर साहिब परिसर में की जाने वाली आतिशबाजी से होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए शीघ्र ही कोई निर्णय ले लिया जाएगा। उन्होंने कहा कि आतिशबाजी से निकलने वाले धुएं से श्री हरिमंदर साहिब की मुख्य इमारत को गंभीर खतरा है।

आनंद मैरिज एक्ट सम्बंधी पार्लियमेंट्री कमेटी की कार्यवाही की

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा प्रशंसा

अमृतसर: शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की कार्यकारिणी की स्थानीय गुरू नानक निवास एकत्रता हाल में जत्थेदार अवतार सिंघ की अध्यक्षता में हुई। एकत्रता में लोक

सभा की नए बिल पेश करने वाली पार्लियामेंट्री कमेटी द्वारा आनंद मैरिज एक्ट को कानून बनाने के लिए सर्वसम्मति से सहमति देकर कानून विभाग को भेजे जाने पर जोरदार प्रशंसा करते इस सम्बंध में शीघ्र ही कानून पास करके इसे लागू करने की मांग की गई। जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि सिख बच्चे-बच्चियों के आनंद कारज की विधि से हुए विवाह रजिस्टर्ड कराए जाने के सम्बंध में मैरिज एक्ट बनाने के लिए पंजाब के मुख्यमंत्री स. प्रकाश सिंघ बादल विशेष दिलचस्पी ले रहे हैं। इस सम्बंध में उन्होंने पंजाब सरकार का भी धन्यवाद किया।

कुरुक्षेत्र में शिरोमणि कमेटी के सब-आफिस का उद्घाटन

अमृतसर: सिख जगत की प्रतिनिधि धार्मिक संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने हमेशा हरियाणा राज्य के सिखों के प्रत्येक दुख-सुख के समय उनकी आदर्श अगुआई की है और भविष्य में भी करती रहेगी। जहां कहीं भी आवश्यकता हुई शिरोमणि कमेटी हरियाणा के सिखों के हितों की रक्षा के लिये यत्नशील हुई है। उक्त विचारों का प्रकटावा जत्थेदार अवतार सिंघ अध्यक्ष शिरोमणि कमेटी ने किया। कुरुक्षेत्र में शिरोमणि कमेटी के सब-आफिस का उद्घाटन करते हुए जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि मैं गर्व महसूस करता हूं कि शिरोमणि कमेटी हरियाणा के सिखों की भावनाओं का सम्मान करती है।

१३ व १४ वर्ष के बच्चों द्वारा

गुरमति के प्रचार के लिए तख्त साहिबान की पैदल यात्रा

अमृतसर: बाबा अजेपाल सिंघ खालसा हाई स्कूल, नाभा (पटियाला) के छठी तथा सातवीं कक्षा के विद्यार्थी गगनदीप सिंघ तथा दीपक सिंघ ने शिरोमणि कमेटी द्वारा चलाई 'अमृत छको सिंघ सजो' लहर से प्रेरित होकर अमृत छक कर तीन तख्त साहिबान की पैदल यात्रा करते हुए नौजवानों को 'अमृत छको सिंघ सजो' लहर के तहत पतितपुना तथा नशों के सेवन जैसी सामाजिक बुराइयों के प्रति जागरूक करने का बीड़ा उठाया है। ये सिख बच्चे २४ नवंबर से नाभा से चलकर २९ नवंबर को तख्त श्री केसगढ़ साहिब पहुंचे तथा ५ दिसंबर को श्री अकाल तख्त साहिब पहुंच कर नतमस्तक हुए। यहां से वे तख्त श्री दमदमा साहिब के लिए रवाना हुए। श्री अकाल तख्त साहिब के जत्थेदार ज्ञानी जोगिंदर सिंघ जी ने इन बच्चों का उत्साह बढ़ाने के लिए गुरू-घर की बख्शिश सिरोपा प्रदान किया। ■

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसैट प्रैस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०१-२००८